शैलसूत्र

अप्रैल-जून 2023 ISSN 24558966, पत्रिका पंजीकरण संख्या TELHIN/2008/30044

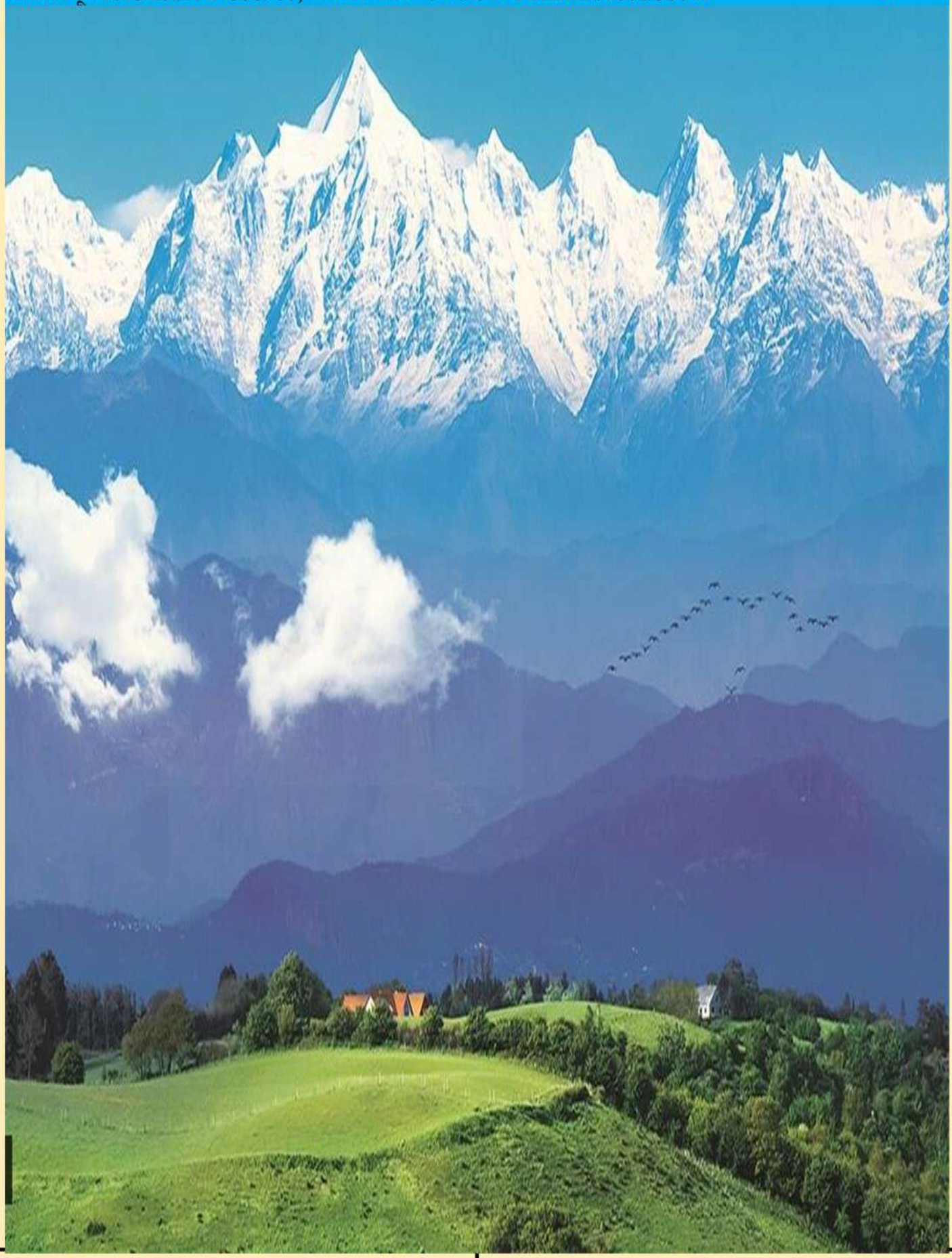

❖वर्ष-सोलह ❖ अंक-2❖ ❖ अप्रैल-जून- 2023 ❖

सम्पादन परामर्श
डॉ. प्रभा पंत-09411196868
सम्पादक
आशा शैली -9456717150, 8958110859 7055336168,
सह सम्पादक/समन्वयक
चन्द्रभूषण तिवारी -9415593108/8707467102
सह सम्पादक/शोध प्रबंधक
डॉ. विजय पुरी-09816181836
पवन चौहान-09805402242
विधि-परामर्श
प्रदीप लोहनी-09012417688
प्रचार सचिव
डॉ. विपिन लता 9897732259

1.शैल-सूत्र में प्रकाशित रचनाओं के प्रति सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
2.लेखक अपने विचार प्रेषण के लिए स्वतन्त्र है।
3. शैलसूत्र परिवार के सभी सदस्यों के पद अवैतनिक हैं।
4.प्रत्येक कानूनी विवाद का निपटारा पत्रिका के सम्पादकीय कार्यालय का विधि क्षेत्र होगा।

पत्रिका का शुल्क, खाता सं 024110100000073, कोड सं. □□□□; □□□□ 0000025 अल्मोड़ा अर्बन बैंक, शाखा लालकुआँ अथवा भारतीय स्टेट बैंक शाखा तरुवाला, पाँवटा साहब (हि.प्र.) कोड सं. □□□□; □□□□ 0000703 खाता सं 30116574461 में जमा करायें।

मूल्य-एक प्रति 25/-,
वार्षिक 100/-,
आजीवन 1000/-,
संरक्षक सदस्य 5100/-

परामर्श:-

डॉ. श्यामसिंह 'शशि' -09818202120,
डॉ. धनंजय सिंह -09810685549,
डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक', 07906360576

मुख्य संरक्षक :- डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र-09412992244/7060004706
संरक्षक **सदस्य**:- शिव बाबू मिश्र -09412750094, अर्श अमृतसरी -07011758133, डॉ. नवीन कुमार श्रीवास्तव -9212444369, प्रकाश चन्द्र लोशाली -9456114762, डॉ. शीना 9249932945, राजकुमार जैन 'राजन' 09828219919, केशव कुमार पटेल-9919352975, डॉ. विमला व्यास-9452780735, डॉ. शीला त्रिपाठी-9453257279, बृजेश चन्द्र श्रीवास्तव -9451023854, अरविंद कुमार यादव -9125628814, श्रीमती ममता पाण्डेय-9453770833, मौजी लाल पटेल-9936380977, ए.के. पवार-9810059715, डॉ. ए.जे. अब्राहम- 9447375381, **डॉ. श्रीमती उषा मिश्रा-9450610608, श्री चंदन प्रताप सिंह -7317559999, श्री सर्वेश सिंह शौनक-7007164024, श्री रूप चन्द शर्मा -9935353480,** राम मूरत चौहान-**9415885622,** डॉ. नीतिका नैन -9536379106, राकेश कुमार कुशवाहा -8318525500, हिमांशु कुमार तिवारी-9335183600, मनोज कुमार मिश्र-9935422927, संजीव कुमार मिश्र-9340581505, वीरेंद्र कुमार मिश्र-8287985767

विशेष सहयोगी

पंकज बत्रा -9897142223, सत्यपाल सिंह 'सजग' -09412329561, राधेश्याम यादव -80066722221, (लालकुआँ), निरुपमा अग्रवाल -9412463533, निर्मला सिंह -9412821608, (बरेली), दर्शन 'बेज़ार'-आगरा -9760190692, डॉ. राकेश चक्र -9456201857, (मुरादाबाद), सूरत भारती, (हि.प्र.) -09418272934, कृष्णचन्द्र महादेविया, (मण्डी हि.प्र.) -09857083213, डॉ. वेदप्रकाश प्रजापति 'अंकुर' (हल्द्वानी) -9412943042,

सम्पादकीय कार्यालय एवं पत्र व्यवहार का पता-
-साहित्य सदन, इन्दिरानगर-2
पो.-लालकुआँ, जिला-नैनीताल (उत्तराखण्ड) पिन-262402
मो.-09456717150, 7055336168,
□□□□□□□□□□.□□□□□□@□□□□□.□□□

स्वामी, प्रकाशक, तथा मुद्रक आशा शैली (इन्दिरा नगर-2, लालकुआँ, जि. नैनीताल) ने एच.जे. इंटरप्राइजेज़, खानचन्द मार्केट, हल्द्वानी (नैनीताल) से मुद्रित कराया। सम्पादक आशा शैली (इन्दिरा नगर-2, लालकुआँ, जि. नैनीताल-262402)

विधा		लेखक	पृष्ठ
सम्पादकीय			
वैचारिकी	हमारे गाँव और नील की खेती	चन्द्रभूषण तिवारी	04
सम्पादकीय			05
धरोहर: अभिवादन का मनोविज्ञान		शंकर लाल माहेश्वरी	06
माँ (एक शब्दचित्र)		डॉ. एल.सी. शर्मा	08
कथा साहित्य			
प्रवासी कहानी: हाथों से झरती रेत -रविंदर सिंह सोढी, अनुवाद (प्रो. नव संगीत सिंह)			09
थरथराती लौ		सुरेश बाबू मिश्रा	14
लघुकथा: विश्वास		रश्मि लहर	16
बहुत देर कर दी		सुदर्शन पटयाल	17
हिन्दी भाषा और विराम चिन्ह		डॉ. विजय कुमार सिंघल	20
धर्मवीर भारती के उपन्यास गुनाहों का देवता में.....		डॉ. प्रवीण ठाकुर	22
सबके वश की बात नहीं		गिरेंद्र सिंह भदौरिया	27
कवित तुम ऐसी रचो कविता		रतन सिंह किरमोलिया	28
सुधेंदु ओझा के दो गीत			29
तेरा गीत-डॉ. प्राची जायसवाल, बांस		रणजोध सिंह	30
ग़ज़लें		विज्ञानव्रत और प्रमोद चौहान	31
मदर डे		उदयवीर भरद्वाज	32
भारत दर्शन: कुमारनल्लूर देवी मन्दिर		डॉ. श्रीकला यु	33
छत्तीसगढ़ी लोककथाओं में हास्य व्यंग्य		डॉ मृणालिका ओझा	44
उत्तर आधुनिक दंशों की गीतात्मक अभिव्यक्ति		पूनम सिंह	48
उड़ान: मानवीय संवेदनाओं का सरोकार		प्रो. नव संगीत सिंह	50

क्षेत्रीय सहयोगी

1- Dr. L.C. Sharma,
IIRD Complex,
Bye-pass Road, shanan,
Sanjauli, Shimla-6 (H. P.)
mo. 09418014761
iirdsml@gmail.com

2. अंजना छलोत्रे 'सवि',
जी-48, फारच्यून ग्लोरी
-8, एक्सटेंशन, रोहित नगर
बाबडियाँ कला, (नियर जानकी हास्पिटल) भोपाल
म. प्र. 462039
mo. 08461912125
anjana.savi@gmail.com

3. श्री कृष्ण चन्द्र महादेविया
गाँव महादेव, तह. सुन्दर नगर,
मण्डी (हि.प्र.) 175018

4. डॉ. विजय पुरी, ग्राम
पदरा, डॉ. हंगलोह, त. पालमपुर,
कांगड़ा (हि. प्र.)
मो. 7018516119, 9816181836

5-श्रीमती शिवा धरावेश,
20/7, दुर्गा कालोनी तरुवाला, पाँवटा साहिब,
जि. सिरमोर-173025 (हि.प्र.)
मो. 08894892999

6. चन्द्रभूषण तिवारी
ग्राम टी.टी.अब्दलपुर, डाकघर हरिसेन गंज,
(मऊआईमा) प्रयागराज-212507
मो. 9415593108, 8707467102
cbtiwari04091966@gmail.com

7. दिनेश पाठक 'शशि'
28, सारंग विहार, रिफ़ाइनरी नगर,
मथुरा- (उत्तर प्रदेश) 9412727361,
ईमेल- drdinesh57@gmail.com

8. श्रीमती पूर्णिमा ढिल्लन
फ्लैट नं.-401, बिल्डिंग-5, अशोक अस्टोरिया,
गोवर्धन विलेज, गंगापुर रोड, नासिक-422222,
मो. 7767943298

9- Dr. A. J. Abraham,
ANCHANIYIL A.K.G. Unichira road, Changampuzha nagar, post- Kochi-33', Kerala. mo. 9447375381

11. डॉ. परमानन्द तिवारी (प्राचार्य)
शास. तुलसी महाविद्याल अनूपपुर,
जिला अनूपपुर (म.प्र.) मो. 9424931012
Email...hegtdcano@mp.gov.in

Dr.Sheena Eapen,
House No.2, Alphonsa Meadow,
sThekkemala P.O Kozhencherry,
Pathanamthitta, Kerala-689654

हमारे गाँव और नील की खेती

चन्द्र भूषण तिवारी 'चन्द्र'

महात्मा गाँधी कहते थे, कि यदि भारत का असली दर्शन करना है तो आपको गाँव जरूर जाना चाहिए! सच है कि देश की अधिकतर जनसंख्या आज भी गाँव में ही निवास करती है। भारत के शहरों के मुक़ाबले गाँव छोटे तो ज़रूर हैं लेकिन ज़िन्दगी का असली आनन्द वहीं आता है। हरे-भरे खेत खलिहान, निर्मल जल लेकर बहती हुई नदियाँ, हमेशा कामकाजी और मेहनती लोगों की मुस्कान, भागते दौड़ते बच्चों की खिलखिलाहट, बूढ़े लोगों के होठों पर मुस्कान, खट्टे आम में मिठास-सी देखने को मिलती है।

भारत के गाँव में किसान दिनभर खेतों में काम करके शाम को जब अपने घर लौटते हैं तो उनकी आँखों में जो गर्व और सुकून देखने को मिलता है वह कहीं और नहीं मिलता। गाँव की स्त्रियाँ अपने हुनर से अलग-अलग तरह के सामान तैयार करती हैं। कुछ सिलाई-बुनाई के काम में माहिर होती हैं तो कुछ मिट्टी के सामान बनाने में। गाँव में एक से बढ़कर एक हुनर देखने को मिलते हैं। भारत एक कृषि प्रधान देश है और आज भी लोगों की जीविका का मुख्य स्रोत कृषि ही है। फिर भी गाँव की छवि बदल चुकी है, शहरों के तरह अब गाँव में भी पक्की सड़कें देखने को मिलती हैं सड़कों के कारण गाँव का आर्थिक ढांचा पूरी तरह से बदल गया है।

आपको जानकर आश्चर्य होगा कि किसी समय हमारे देश में नील की खेती बहुतायत में होती थी। परन्तु इससे किसानों को कोई लाभ नहीं मिलता था बल्कि उन्हें बहुत ज्यादा नुकसान भी सहना पड़ता था। नील की खेती भारत में बंगभूमि पर 1777 में शुरू की गई। यूरोप के कई देशों में नील की अच्छी खपत होने के कारण अंग्रेजों की इसमें अधिक रुचि थी परन्तु नील की खेती के कारण किसानों की जमीने बंजर होने लगीं। इतना ही नहीं दिन-रात खेतों में काम करने के बाद भी अंग्रेज कभी भी किसान से लगान वसूल करना नहीं भूलते थे। जिसके कारण बंगाल में 1859 में विद्रोह उठा जिसे 'इंडिगो विद्रोह या नील विद्रोह' कहा गया। यह एक साल से अधिक समय तक चला।

नील की खेती रैयोटिक पद्धति से की जाती थी, इस पद्धति में किसान को एक समझौते पर हस्ताक्षर करने को विवश किया जाता और ऋण के काग़ज़ों पर हस्ताक्षर करने के बाद हमारा किसान अपनी एक चौथाई जमीन पर नील की खेती करने को प्रतिबंधित होता। इस लूट में जिमींदार और ब्रिटिश सरकार बराबर के भागीदार होते और नील की खेती करने वाले किसान को बाजारभाव से महज 2 या तीन प्रतिशत तक मूल्य ही मिल पाता। इसके विरोध में सबसे पहले 1859-60 में बंगाल के किसानों ने आवाज उठाई।

यह विद्रोह नादिया जिले के पास कृष्ण नगर के चौगाचा गाँव में शुरू हुआ। इस विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेजों का दमन चक्र भी चला। कुछ किसान मारे भी गये और अनेक किसानों पर मुकदमें भी चलाए गए। अंततः इस विद्रोह को बड़ी कठोरता से कुचल दिया गया।

प्रयागराज (उ. प्र.), भारत।
सम्पर्क सूत्र - 8707467102

मनुष्य के दुख का कारण उसका प्रेम ही है, वह जितना अधिक मोह करेगा उतना ही अधिक कष्ट भी भोगेगा।

सम्पादकीय

कभी-कभी प्रत्येक राही थकने लगता है। शायद मैं भी थकने लगी हूँ, परन्तु नहीं! बचपन में माँ ने हाथ में गीता पकड़ा कर 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' का पाठ पढ़ाया है तो वह घुट्टी में मिला पाठ चैन से कहाँ बैठने देता है, उस पर भी फल की इच्छा मत करो का उदुपदेश। लेकिन यह भी सत्य है कि कर्म करोगे तो फल तो मिलेगा ही। सो शैलसूत्र युवा हो गई है।

पत्रिका हेतु सामग्री चयन करते समय एक समस्या सम्भवतया आज हर सम्पादक के सामने आ रही है और वह है भाषा की अशुद्धता। आज लेखन जगत में एक विचित्र-सी प्रथा चल पड़ी है। मैं पुराने लगखकों की बात नहीं कर रही परन्तु कई लेखक जो स्वयंभू मठाधीश भी बने हुए हैं, वाक्य विन्यास पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते। आम बोल-चाल की आँचलिक भाषा का प्रयोग साहित्य में करने लगे हैं, जो साहित्य के स्वास्थ्य के लिए बिल्कुल भी हितकर नहीं है। इन स्वनामधन्य मठाधीशों के यहाँ स्त्रीलिंग और पुलिंग का ध्यान तो कौन कहे, ये लोग ''मैं खा चुका हूँ, न कहकर मैं खाया हूँ/ खाई हूँ कहेंगे और इसी तरह लिखेंगे भी। पिछले दिनों एक लेखिका ने कहीं लिखा था, ''मैं झांकी हूँ।'' पढ़कर मूठ ही खराब हो गया। असल में उनको लिखना चाहिए था कि 'मैंने झांक कर देखा' अब ''मैं झांकी हूँ।'' का शाब्दिक अर्थ निकालिए तो आपको हँसी ही आएगी। इसे यूँ देखिए, ''इस बार शहर वालों ने अच्छी झांकी निकाली। भई हमें तो वह फौजियों की झांकी सबसे अच्छी लगी। क्या ग़ज़ब झांकी बनाते है जी वे कारीगर।'' अब वे लेखिका स्वयं को झांकी, अर्थात तमाशा ही तो कह रही हैं। बहुत खीज होती है इन बातों से, कहाँ तक ऐसी भाषा को सही करते रहें हम? इसके अतिरिक्त अच्छे-अच्छे लेखक विराम चिन्हों पर ध्यान नहीं देते। वे यह नहीं सोचते कि यही गल्तियाँ उनकी रचना को कमजोर भी करती हैं और कई बार अर्थ का अनर्थ भी कर देती हैं। बहुत-सी अच्छी रचनायें हमें भाषा की अशुद्धियों के कारण ही छोड़ देनी पड़ती हैं। इतना ही नहीं बड़े-बड़े समाचार उद्घोषक भी आज इसी रास्ते पर चल पड़े हैं। कोई समय था जब आकाशवाणी के उद्घोषकों को सुनकर हम लोग अपने उच्चारण और शब्द विन्यास को सुधारा करते थे। आज हमारे उद्घोषक ही पेड़ को 'कट गई' कहते देखे जा सकते हैं और आग को 'लग गया'। नेता जी 'आती हैं' तो नदी चढ़ 'गया' हो जाता है। अब यदि आदिपुरुष इस असभ्य भाषा के हत्थे चढ़ गया है तो कौन बड़ी बात हो गई, झेलिए।

आशा शैली

अभिवादन का मनोविज्ञान

-शंकर लाल माहेश्वरी

भारतीय परम्पराओं में अभिवादन का विशेष महत्व रहा है। भारतीय जन जीवन में इस परम्परा का प्रादुर्भाव सदियों पूर्व ऋषि आश्रमों द्वारा प्रारम्भ हुआ। हमारे ऋषियों, संतों और साधुओं ने अपने आश्रमों में शिष्य परम्परा के अन्तर्गत अभिवादन की संस्कार वृत्ति को महत्ता प्रदान की। गुरु चरणों में बैठकर शिष्य विद्या ग्रहण करता था तभी उसे अभिवादन परम्परा की अनुपालना हेतु प्रेरित किया जाता रहा। यह परम्परा भारत भूमि पर सदियों पूर्व से पल्लवित हुई और आज भी इस परम्परा का निर्वहन भारतीय जन जीवन में दृष्टिगत होता है। अभिवादन की यह संस्कृति हमारे देश की अनुपम धरोहर है। एक दूसरे के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने की परम्परा के रूप में अभिवादन का प्रयोग होता रहा है।

वर्तमान में अभिवादन की जितनी भी रीतियाँ प्रचलित हैं उनमें सर्वाधिक वैज्ञानिक एवं मनोविज्ञान पर आधारित भारतीय पद्धतियों को मान्य किया गया है। साष्टांग प्रणाम, चरण स्पर्श, नमस्कार, हाथ जोड़ना, गले-मिलना अभिवादन के प्रमुख स्वरूप हैं। अभिवादन की शारीरिक प्रतिक्रियाओं के साथ ही अपने इष्ट देव का स्मरण करते हुए संबोधन करना विशेष रूप से आत्मीयता का परिचायक है। मनोविष्लेशण के आधार पर अभिवादन से एक दूसरे के मनोभावों से सौहार्द्र स्नेह तथा आत्मीय भावों का उद्‌गम होता है तो सामाजिक जीवन को भी समरस बनाने में प्रभावपूर्ण होता है। हमारे पौराणिक ग्रंथों तथा वेदों में भी अभिवादन परम्परा का विशेष उल्लेख मिलता है। जिसके अनुसार परस्पर आत्मीयता के साथ कल्याणकारी मनोभावों का उद्‌घाटन होता है। हार्दिक स्नेह तथा निकटता के भावों का आविर्भाव होता है।

अभिवादन के संबंध में मनुस्मृति में लिखा गया है ''अभिवादन करने का जिसका स्वभाव है और विद्या तथा अवस्था में बड़े लोगों का जो नित्य अभिवादन करते हैं, उनकी आयु, विद्या, यश और बल की वृद्धि होती है जो मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनुकूल है। अभिवादन कर्ताओं की आन्तरिक व आत्मिक भाव तरंगे एक दूसरे के प्रति मंगलकामना के साथ कल्याणकारी भावनाओं को प्रतिष्ठापित करती हैं। अभिवादन प्रक्रिया में चरण स्पर्श को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है। हमारी वैदिक परम्पराओं के अनुसार इस अवस्था को विशेष मान्यता प्रदान की गई है। मनुस्मृति में उल्लेख है कि ''वेद के स्वाध्याय के प्रारम्भ और अंत में सदैव गुरु के दोनों चरणों का स्पर्श करना चाहिए। बांयें हाथ से दांहिने पैर और दांयें हाथ से बांयें पैर का स्पर्श चामत्कारिक होता है।

चरण स्पर्श का मनोविज्ञान विशेष कोटि का है। परस्पर अहम को गलित कर विनीत भाव से शुभ कामनाओं के साथ एक दूसरे के प्रति कल्याणकारी भाव तरंगें प्रसारित होती है तो उसका सीधा प्रभाव उनकी जीवनचर्या पर पड़ता है। मनुस्मृति में प्रस्तुत किया गया है कि ''जब हम अपने से अधिक श्रेष्ठ और योग्य व्यक्ति के चरणों का स्पर्श करते हैं तो उस सामने वाले व्यक्ति में प्रतिष्ठित ज्ञान और गुणों की तरंगों को अपने शरीर में प्रविष्ठ होते देख सकते हैं। वे तरंगें हमारे शरीर में प्रविष्ट होने लगती हैं।'' वैज्ञानिक सिद्धान्त हैं कि व्यक्ति के चारों और प्रस्तुत ऊर्जा का क्षेत्र (आभा मण्डल) जितना प्रबल होगा उतना ही अधिक वह सामने वाले को प्रभावित करने में अधिक सक्षम और सफल होगा।

अभिवादन की चरण स्पर्श की क्रिया का वैज्ञानिक आधार है । मानव शरीर का बांया भाग ऋणात्मक एवं दाहिना भाग धनात्मक होता है। जब दो व्यक्ति

आमने सामने खड़े होते है तो सहज रूप से शरीर की धनात्मक ऊर्जा वाला भाग ऋणात्मक भाग के सामने और ऋणात्मक ऊर्जा वाला भाग धनात्मक ऊर्जा वाले भाग के सामने आ जाता है। जब सामने वाला व्यक्ति स्वयं से श्रेष्ठ व्यक्ति का चरण स्पर्श करता है तो दूसरा व्यक्ति चरण स्पर्श करने वाले के सिर पर आशीर्वाद स्वरूप हाथ रखता है तो दोनों की समान ऊर्जाएँ परस्पर टकराती हैं और तब उन दोनों की ऊर्जाओं का मिलन होता है तब श्रेष्ठ ऊर्जा वाले की ऊर्जा अपने से कम श्रेष्ठ वाले व्यक्ति में प्रवाहित होने लगती है। इस दृष्टि से चरण स्पर्श की परम्परा सर्वाधिक प्रभावशाली मानी गई है।

अभिवादन की प्रस्तुति से एक अपिरिचित व्यक्ति भी आत्मीय भाव के साथ स्नेहासिक्त होकर उसका अभिन्न बन जाता है। अभिवादन हमारी सांस्कृतिक परम्परा का अनूठा कृत्य हैं जिससे व्यक्ति व्यक्ति से जुड़कर स्नेह बंधन में बंध कर आत्मीयता के भावों से परिपूरित होकर आनन्दानुभूति करने लगता है। जब प्रणामकर्ता विनीत भाव से नतमस्तक होकर नमस्कार करता है तो मन में कृतज्ञता के भावों का अंकुरण होता है। जो हमारी भावात्मक एकता को भी पोषण प्रदान करता है। जब कहीं पर भी परस्पर राम-राम सा, जय श्री कृष्णा, सत श्री अकाल, अदाबअर्ज, वाहे गुरु दा खालसा की अमृत वाणी से अभिवादन होता है तो मन मन्दिर में विशेष आध्यात्मिक विचारों को प्रश्रय मिलता है और एकात्म भावों में प्रगाढ़ता उत्पन्न होती है। जय हिन्द, वन्देमातरम आदि शब्दों द्वारा परस्पर अभिवादन होता है तो राष्ट्रीय एकता के भावों को बल मिलता है। भाई चारे की भावना में वृद्धि होती है तथा जन जीवन में समरसता का प्रादुर्भाव होता है।

अभिवादन प्रक्रिया में विनीत भाव प्रमुख है। एक दूसरे के प्रति विनम्रता का भाव अनिवार्य होता है। महाकवि कालीदास से ''रघुवंश 11/8'' विनय को राजा से लेकर रंक तक का सबसे बड़ा भूषण बताया है जो नमस्कार ही से सुलभ होता है। नमस्कार मूल धातु 'नमः' से नमस्कार बना। नमः का अर्थ है नमस्कार करना, वन्दन करना। नमस्कार का मुख्य उद्देश्य है जिन्हें हम नमन करते हैं उनसे हमें आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक लाभ उपलब्ध हो। अभिवादन द्वारा नम्रता में वृद्वि होती हैं तथा अंहकार समाप्त होता है। कृतज्ञ भाव के साथ सात्विकता प्राप्त होती है। मंदिर में चढ़ते समय सीढ़ियों को भी नमन करते हैं। मन व बुद्धि इन आठ अंगों से ईश्वर के शरण जाना साष्टांग नमस्कार होता है। बड़े बूढ़ों को नमन करने से उनमें विद्यमान देवत्व की शरण में प्रणाम कर्ता प्रस्तुत होता है।

अभिवादन या प्रणाम तथा प्रत्याभिवादन हमारे देश के लौकिक सांस्कृतिक शिष्टाचार का ऐसा अनुष्ठान हैं जिसमें आत्मीयता के द्वारा आत्मा के माधुर्य का निर्झर स्वतः ही बहता रहता है। जो रीति रिवाज एवं समस्त कृत्रिम बंधनों को तोड़कर व्यक्ति की व्यक्ति से अदृश्य भाव डोरी से बंधता है। पश्चिमी सभ्यता का अभिवादन समय सूचक है तथा इस्लाम संस्कृति का अभिवादन एकता का प्रेरक है परन्तु हमारे देश का अभिवादन शिष्टाचार आत्मा के सौन्दर्य को परस्पर बांटने का अनुपम साधन है।

नारद पुराण में उल्लेख है कि अपने आराध्य या देवताओं की पूजा अष्टांग या पंचाग प्रणाम करना चाहिए। आज भी हमारे जन जीवन में सांष्टांग प्रणाम पूर्ण रूप से रचा बसा है। पद्म पुराण के संस्कार प्रकाश में प्रयुक्त उल्लेख के अनुसार प्राचीन काल में ब्राह्मण अपनी दाहिनी भुजा कान की सीध में फैलाकर भद्र पुरुषों को स्वस्ति उच्चारण कर अभिवादन किया करते थे। दोनों हाथ जोड़कर क्षत्रीय को छाती तक, वैश्य को कमर तक तथा शूद्र को पैर फैलाकर अभिवादन किया जाता था। विष्णु धर्म सूत्र के अनुसार (32-18) प्राचीन काल में तुलनात्मक श्रेष्ठताओं की दृष्टि से ब्राह्मण की श्रेष्ठता ज्ञान से, क्षत्रिय की श्रेष्ठता शक्ति से, वैश्य की श्रेष्ठता संपति से तथा शूद्र की

श्रेष्ठता आयु से मानी जाती थी।

पुराकाल में पद्म पुराण के अनुसार प्राचीन भारतवासियों का स्वभाव था कि ब्राह्मण से भेंट होने पर कुशलता, क्षत्रिय से अनामय, वैश्य से कुशल क्षेम तथा शूद्र से उसके स्वाभाव के संबंध में संभाषण के पूर्व पूछा जाता था। मनोविश्लेष्णात्मक दृष्टि से देखा जाए तो ऐसा तत्कालीन परम्पराओं तथा वर्ग विशेष की विशिष्टताओं का परिचायक था।

इसी प्रकार भारत भूमि पर संत परम्पराओं से लेकर वर्तमान भौतिकवादी युग तक भी अभिवादन प्रक्रिया निरन्तर अस्तित्व में है। यद्यपि जाति, धर्म, सम्प्रदाय वर्ग विशेष की अभिवादन शैली में न्यूनाधिक भिन्नता हो सकती हैं किन्तु यह निर्विवाद सत्य हैं कि जन जीवन में सौहार्दपूर्ण वातावरण के निर्माण, आत्मीयता के आविर्भाव, समरसता के संचरण तथा विश्व बंधुत्व की भावना को प्रश्रय देने के लिए अचूक औषध है जो न केवल व्यक्ति की व्यक्ति से दूरियाँ ही दूर करती है अपितु वैज्ञानिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है जो ऊर्जा तरंगों के आदान प्रदान के साथ ही शक्ति संवर्धन तथा संवेदनशीलता के प्रसारण में महत्ती भूमिका का निर्वहन करती है। त्याग, स्नेह, श्रद्धा, सम्मान और निराभिमान को प्रगाढ़ता देने में अभिवादन प्रक्रिया सक्षम हैं यह भारत देश की अतिविशिष्ट परम्परा है।

पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी
पोस्ट-आगूचा, जिला-भीलवाडा
राजस्थान - 311022
मो. 9413781610

abhivadan ka manovigyan.docx

माँ

डॉ लोकचन्द शर्मा

घर के किसी कोने में रखे सेर को ढूँढ कर लाना उसमें से कौले धान के चावल के शोरे छाँट कर निकालना फिर पथर की शील पर बट्टे से धीरे धीरे कूटना और लगभग महीने भर के थोड़े थोड़े प्रयास से आधा सेर चावल तैयार करना फिर मेरे शिमला से गाँव आने पर बाक़ी चावलों की जगह कौले धान के चावल का भात बना कर खिलाना और मुझे खिला कर स्वयं तृप्त होना माँ! मुझे आज भी याद है

लगभग 85 वर्ष की उम्र में बिना किसी और को बताये रोंगी को भिगो कर पीसना ताकि मेरी पसंद के इण्डरे बना कर खिला सके, माँ मुझे आज भी याद है।

याद तो मुझे वह युग भी है जब आपके संघर्षों के आगे नियति को भी झुकना पड़ा और अपने बच्चों की भरपूर परवरिश और बेहतरीन शिक्षा का स्वप्न आपने पूरा किया, जिससे यह साबित हुआ कि ईश्वर माँ के रूप में सदैव हमारे साथ है।

माँ हर जन्म में आपका पुत्र बन कर आऊँ और दुनिया के तमाम सुखों को आपके चरणों में न्यौछावर कर दूँ, बस यही कामना है। शुभ मातृ दिवस माँ!

निदेशक आई.आई.आर.डी.पी.
शनान, शिमला
iirdsml@gmail.com

हाथों से झरती रेत

अनु : प्रो नव संगीत सिंह

मूल : रविंदर सिंह सोढी

रिचमंड, कनाडा
001 604369 2371

जब गुरी की छोटी बहन सैमी घर आ रही थी तब गुरी और नतालिया कार में बैठकर बाहर जा रहे थे।

नतालिया के साथ अपने भाई को देखकर उसने नाक-मुँह सिकोड़ा। जब नतालिया की नज़र सैमी पर पड़ी, तो उसने अपना हाथ हिलाया और उसका अभिवादन किया, लेकिन सैमी ने कोई जवाब नहीं दिया और घर के अंदर चली गई।

नतालिया उसके इस व्यवहार से बहुत हैरान हुई और उसने गुरी से पूछा, ''गुरी! वाह्ट हैपन्ड टु योअर सिस्टर? आइ वेवड टु हर, बट शी इग्नोरड।"

''फारगेट अबाऊट हर। शी'ज़ मैड।" गुरी ने नतालिया के लिए कार का दरवाजा खोलते हुए कहा।

सैमी अभी घर के अंदर ही गई थी जब उसकी माँ ने उसे देखा और गुस्से से कहा, ''यह क्या! तुम आज भी लेट आई हो? क्या तुम समय पर नहीं आ सकतीं?"

सैमी, जो गुरी और नतालिया को एक-साथ देखकर पहले से ही गुस्से में थी, ने कहा, ''मुझे गुरी की तरह कार तो लेकर नहीं दी है। बसों में धक्के खाती आती हूँ। दस-पंद्रह मिनट देर क्या हो जाए, तो पूछताछ शुरू हो जाती है।"

ऐसा उत्तर सुन कर माँ को गुस्सा आ गया और उसने सैमी से कहा, ''एक तो चोर, साथ में चतुर भी। जब कमाओगी तब गाड़ी भी ले लेना। तुम तो अभी अपने माता-पिता के सिर पर ऐश कर रही हो।"

''ऐश मैं नहीं, गुरी कर रहा है। वह कहाँ एक जगह टिक कर काम करता है? वह गोरी के साथ घूमने के लिए कभी सौ, कभी दो सौ डॉलर मांगता ही रहता है।" उसने अपना बैग सोफे पर फेंकते हुए कहा।

''आज किसी से लड़कर आई हो क्या? घर आते ही झगड़ा शुरू कर दिया। झगड़ालू कहीं की! भाई को देख कर जलती है?" माँ सैमी के रंग-ढंग देखकर डर-सी गई।

सैमी ने फ्रिज से जूस की एक बोतल निकाली और एक गिलास में डालते हुए कहा, ''यदि सच कहूँ तो झगड़ालू ही समझो। जब गुरी लंडर सी नतालिया के साथ घर आता है तो तुम उन दोनों के आगे-पीछे घूमती हो, तुम भी और डैड भी। क्या तुम्हें पता है, वह गुरी से पहले भी दो-तीन बॅयफ्रेंड्स के साथ रहती रही है। क्या तुमने कभी गुरी को रोका? हर चौथे दिन उसे घर लाने का क्या काम?" सैमी आज बदला लेने के मूड में थी।

दरअसल, कई दिनों से वो अपने मॉम-डैड की पाबंदियों के कारण बहुत दुखी थी। जब भी वह पैसे मांगती थी, तो उसे कई बातें सुननी पड़ती थीं। फार्मेसी की मुश्किल पढ़ाई के कारण वह बहुत ज़्यादा काम नहीं कर सकती थी। वह अपनी पढ़ाई पूरी करने के लिए बैंक से कर्ज लेने की बात करती, तो उसके माता-पिता लड़ने को आते। उनका कहना था कि अन्य लड़कियाँ भी हैं, जो पढ़ती भी हैं और अपना खर्च चलाने के लिए साथ-साथ काम भी करती हैं। वे अपने घर की बेसमेंट में रहने वाली तीन लड़कियों की मिसाल देते कि वो अपनी फीस कैसे भरती हैं? वे खाने-पीने की व्यवस्था भी

करती हैं और किराए के लिए भुगतान भी करती हैं। सैमी अपने दिल में सोचती कि वह उनसे पूछे तो सही कि वे अपना समय कैसे व्यतीत करती हैं। वे जहाँ काम करती हैं, वहाँ उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है? उन्हें मजबूरी में क्या कुछ नहीं सहना पड़ता। वह कई बार सैमी से अपने दिल की बात कह चुकी हैं कि कनाडा, ऑस्ट्रेलिया जैसे देश विदेशों के छात्रों के लिए कैद के समान हैं। यहाँ की तस्वीरें ही अच्छी लगती हैं। असलियत का पता तब चलता है जब कोई व्यक्ति यहाँ आकर फंसता है। ऐसा कौन सा काम है जो यहाँ नहीं करना पड़ता? जो लोग बाप से भी बड़ी उम्र के होते हैं, वो भी अपनी गर्लफ्रेंड बनाने की जिद करते हैं। जिनको पशुओं की तरह बेसमेंट में रहना पड़ता है, उनकी गुलामी भी करो। दो दिन किराया लेट हो जाए, तो घर से निकाल देने की धमकी देते हैं। बिजली, हीटर का खर्चा अलग से भरो, लेकिन फिर भी बुड़बुड़ाते रहेंगे। ये आंटियाँ तो तबीयत खराब होने का बहाना बनाकर घर का काम भी करवाती हैं। अगर किसी लड़की को कोई परिचित लड़का मिलने आ जाए, तो हंगामा करने से भी नहीं हिचकिचाती। कहीं ऊँची आवाज़ में बात करो या टीवी चालू करो तो लड़ने को आते हैं। खुद चाहे उनके घरों में सारा दिन महाभारत चलती रहे। कई बार तो यह आंटियाँ ही लड़कियों को ग़लत रास्ते पर डाल देती हैं।

सैमी को पता था कि वह अभी अठारह वर्ष की नहीं थी, इसीलिए वह अपने माता-पिता की सहमति के बिना छात्र-ऋण लेने के योग्य नहीं थी। वह अपने घर के घुटन भरे माहौल से बहुत ऊब चुकी थी। उसे बहुत खीझ आती जब वह देखती कि उसका बड़ा भाई अपनी गर्ल फ्रेंड नतालिया के साथ सरेआम घूम रहा है और बिना किसी डर के उसे घर भी ला रहा है। उस समय उसके मॉम-डैड के चेहरे की रौनक देखने लायक होती है। वे दोनों उस गोरी के आगे-पीछे घूमते हैं। डैड तो दो-तीन बार गुरी और नतालिया के साथ बैठकर पेग भी लगा चुके थे। लेकिन वे यह भी जानते थे कि कुछ गोरी लड़कियाँ देसी लड़कों को इसीलिए अपने जाल में फंसा लेती हैं, ताकि उनके सिर पर खूब ऐश कर सकें। क्योंकि गोरे लड़के तो अपनी गर्लफ्रेंड्स से बराबर का खर्च करवाते हैं। उन्होंने एक-दो बार बातों-बातों में गुरी को समझाया भी था कि कहीं कोई उल्टी-सीधी बात न हो जाए।

डेड ने कभी ट्रक तो कभी टैक्सी चलाई थी, टैक्स चोरी करके दो मकान बनाए थे। गुरी ने शेखी-शेखी में नतालिया को सब कुछ बता दिया। डैड चिंतित थे कि कहीं लेने के देने न पड़ जाएँ। गुरी कॉलेज के अंतिम वर्ष में था और पढ़ाई में भी ठीक-ठीक था, लेकिन नतालिया के प्यार में लट्टू उसे किसी तरह की परवाह नहीं थी।

सैमी अक्सर अपनी फ्रेंडज़ से इस बारे में बातचीत करती थी कि उनके अनपढ़ या कम पढ़े-लिखे माँ-बाप लड़का-लड़की में फर्क क्यों करते हैं? इन्होंने अपने लड़कों को तो पूरी तरह से ढील दे रखी है और जब इस ढील की वजह से बात बिगड़ जाती है तो माथे पर हाथ मारकर रोते हैं। यही नहीं, ये अपनी जवान हो रही लड़कियों पर कई तरह की बंदिशें लगाते हैं। खुले-डुले माहौल में पली-बढ़ी लड़कियों को यह समझ नहीं आती कि अगर उनका भाई अपनी गर्लफ्रेंड को घर में ला सकता है तो लड़कियाँ अपने बॉयफ्रेंड को क्यों नहीं? जब वे अपनी हमउम्र गोरी लड़कियों को बेरोक-टोक घूमते देखतीं तो सोचने पर मजबूर हो जातीं कि लड़कियों की आजादी के समय उनके माँ-बाप को पता नहीं क्या सांप सूंघ जाता है?

कई गोरी लड़कियाँ तो इसी बात से देसी लड़कियों से नफरत करतीं। वह अपनी कई देसी सहेलियों को जानती थी जिन्होंने अपने पिछड़े घरेलू माहौल कारण बाहर जानबूझ कर पूरी खुलें लीं। शारीरिक खुलों की तो किसी को परवाह ही नहीं थी। कभी किसी बहाने, तो कभी किसी, उन्होंने

अपने बॉयफ्रेंड्स के साथ दिन बिताए। अक्सर ही लड़कियाँ ऐसी कुसंगत में चली जाती हैं, जहाँ पर उन्हें नशे की लत लग जाती। ऐसा वे युवा जोश के साथ-साथ उनके अपने माता-पिता से बदला लेने के लिए भी करतीं। नशा पूरा करने के लिए वे घर से पैसे की चोरी करतीं, अवसर मिलने पर माँ-बाप के क्रेडिट कार्ड का दुरुपयोग करने से भी न हिचकिचातीं। उस समय परिवार को यह समझ न आता कि वह गहनों या पैसे के डूब जाने का अफ्सोस करें या समाज में अपनी कटी हुई नाक को बचाने के लिए कुछ करें। यद्यपि सैमी ने अभी तक कोई ऐसा क़दम नहीं उठाया था, तो भी कई बार उसके ज़हन में आता कि वह अपने माता-पिता को उनकी सख्ती का मजा ज़रूर चखाए।

वह यह सब कर सकती थी, अगर वह 18 साल की हो गई होती। अब तो वह सिर्फ माँ से ऊँचा-नीचा बोलकर दिल का गुब्बार निकाल लेती थी। उसने अभी तक पिता के सामने अपना मुँह नहीं खोला था, लेकिन एक-दो बार उसने नशे में धुत अपने पिता को जरूर खरी-खरी सुनाई थीं।

एक दिन जब उसके पिता दो-चार पेग लगाकर ऊल-जलूल बकने लगे तो उसने पिता को काफी फटकारा और अपनी भड़ास निकाली। इसी तरह जब एक बार गुरी ने गुस्से में उसके ऊपर हाथ उठाने की जुर्रत की तो सैमी ने उसे ख़बरदार किया कि वह ज़बान से बात करे और यदि उसने उसके ऊपर उठाया तो वह पुलिस बुला लेगी। इससे उसकी माँ डर गई और उसने सैमी को बड़ी मुश्किल से शांत किया। बाद में बेशक, माँ ने सैमी को धमकी भी दी कि अगर उसने फिर से ऐसी बात कही, तो उसे अपनी संपत्ति से बेदखल कर दिया जाएगा। डराने के लिए माँ ने सैमी से यह भी कहा कि वह उसे इंडिया ले जाएंगे और उसकी शादी करके उसे वहीं छोड़ आएंगे। इस तरह की धमकियों को सुनकर सैमी एक बार तो चुप हो गई। उसने इस बारे में अपनी एक बहुत करीबी सहेली से बात की। उसने सैमी को समझाया कि अगली बार जब कभी फिर से उसे कोई इंडिया ले जाने की धमकी दे, तो वह निडर होकर बोल दे कि 'वह लड़के वालों को साफ-साफ कह देगी कि यह शादी उसकी मर्जी के खिलाफ हो रही है और वह कनाडा जाते ही उसे तलाक दे देगी। शादी तो उसे अपने बॉयफ्रेंड से ही करनी है'।

मौका मिलते ही सैमी ने यह बात अपनी माँ को कह सुनाई। यह सुनकर उसकी माँ ने गुस्से में उसके बाल तो नोचे ही, साथ-साथ उसके थप्पड़ भी जड़ दिए। गुस्से में पागल सैमी ने अपने सेल फोन से 911 नं. डायल कर दिया। शुक्र है कि उस समय उसके पिता घर पर ही थे, उन्होंने बड़ी मुश्किल से दोनों को संभाला।

अपने कमरे में जाने से पहले सैमी ने अपनी माँ को धमकी देते हुए कहा, ''मेरे कामों में ज़्यादा दखल-अंदाज़ी करने की ज़रूरत नहीं है। मैं अपना भला-बुरा खुद समझती हूँ। अगर तुमने सख्ती करने की कोशिश की, तो और छह महीनों बाद मैं तुम्हें कहीं मुँह दिखाने लायक नहीं छोड़ूंगी।" यह कहकर वह पैर पटकती हुई चली गई।

सैमी की माँ सोचने लगी कि इस मुंहज़ोर और गुस्सैल लड़की का क्या किया जाए। वह उन दिनों को पछताने लगी, जब वे लोग कनाडा आए थे। वह सोच रही थी कि कनाडा की धरती पर बच्चों को मिली आजादी ने तो उन्हें बर्बाद करके रख दिया है। माँ-बाप तो सिर्फ इनको पालने में ही लगे रहते हैं। आज के बच्चे तो उड़ने योग्य होते ही अपना घोंसला तलाशने लगते हैं। माता-पिता गिरें किसी कुएँ में, उनकी बला से।

वो इन्हीं विचारों में खोई हुई थी कि कब सैमी का डैड, निहाल सिंह आकर उसके बगल वाले सोफे पर बैठ गया, उसे पता ही नहीं चला। कुछ खाँसते ही उसका ध्यान उसकी ओर गया। अपने पति को सोफे पर बैठा देख आश्चर्य से उसने पूछा, ''आज इतनी जल्दी आ गए? कैसे हो? ठीक तो हैं

न आप?"

"हाँ, ठीक हूँ। मन कुछ विचलित-सा है। टैक्सी चलाने को मन नहीं किया।" निहाल सिंह ने धीमी आवाज में कहा।" लेकिन तुम कहाँ खोई हुई थीं। तुम्हें मेरे आने का पता तक नहीं चला। तुम तो बड़ी दूर से मेरे क़दमों की आहट सुन लेती हो!"

"कैसा खोना! ये संतान ही जीने नहीं देती।" उसने सिसकते हुए कहा।

"क्यों, आज ऐसा क्या हो गया?" निहाल सिंह ने कुछ चिंतित होते हुए कहा।

"यदि गुरी को किसी बात से रोकती हूँ, तो वह बाल नोचने को आता है। यदि बेटी को थोड़ा-बहुत समझाती हूँ, तो वह ऊँचा-नीचा बोलती है। मुझे समझ में नहीं आता कि जाऊँ तो कहाँ जाऊँ।"

निहाल सिंह ने इधर-उधर देखा और धीमे-से बोला, "बच्चे घर में ही हैं क्या?"

"वह गोरी के साथ कहीं गया है। सैमी देरी से आई तो मैंने पूछ लिया कि लेट क्यों हो गई? इस वजह से मुझे इस नवाबजादी से खरी-खोटी सुननी पड़ीं।"

"सैमी अब कहाँ है?"

"अपने कमरे में।"

निहाल सिंह ने उसे चुप रहने का इशारा किया। वह थोड़ा चिंतित होकर बोला, "सुनो, अब बच्चों को कुछ भी कहने का समय नहीं है। मैं भी पहले-पहल सैमी को बात-बात पर डांट दिया करता था परन्तु आज की खबर सुनकर तो मैं स्तब्ध रह गया।"

"क्या हुआ?" गुरनाम कौर ने घबरा कर पूछा।

"वाहेगुरु... वाहेगुरु! आजकल के बच्चों का तो रब ही राखा है। सभी टैक्सी स्टैंड वाले उदास-से बैठे हैं आज तो।" निहाल सिंह ने बताया।

"पर हुआ क्या?" गुरनामो ने निहाल सिंह का चेहरा देखते हुए पूछा।

"वह मेरा दोस्त है न जमरौद वाला पाला सिंह, जो मेरे साथ ही टैक्सी चलाता है।"

"हाँ, जिसकी बीवी कई बार हमें गुरुद्वारा में भी मिली है, उसे क्या हुआ?"

"उसे कुछ नहीं हुआ। उसने अपनी बेटी को किसी बात पर डांट दिया। शायद दो-चार घूंसे भी मारे होंगे। बेटी ने पुलिस बुला ली और अंदर करवा दिया और खुद घर से निकल कर किसी गोरे के साथ भाग गई।"

"हाय, मैं मर जाऊँ! ऐसी औलाद से तो बेऔलाद रहना ही अच्छा!" गुरनामो के मुँह से निकला।

"कुछ मत पूछो, गुरनामो! मुझे तो यह सुनकर टैक्सी स्टैंड पर बैठने का मन नहीं हुआ। मैं तो सीधे घर चला आया।" उसने सोफे से उठकर एक गिलास पानी पीते हुए कहा।

कुछ देर दोनों में से कोई कुछ नहीं बोला।

"पाले की बातें सुनकर मैंने तो कानों को हाथ लगाया कि आगे से इन दोनों को कुछ नहीं कहना।"

"बेशक यह हमारे सर पर मिट्टी डाल दें? अरे, ये क्या बात हुई? इन्हें तो कुछ फ़र्क ही नहीं पड़ता। बच्चों को गलत कामों से तो रोकना ही पड़ता है न! नहीं तो ये हमारे सरों में छेद करेंगे।"

"यह देख लो, बेचारे पाले को बेटी की रोका-टोकी करने पर क्या नतीजा भुगतना पड़ा। इन देशों का तो रब ही राखा है।"

"मारो गोली, साले ऐसे कनाडा को। अपनी जुल्ली-तप्पड़ बेचो, चार पैसे हाथ में करो और वापस गाँव चलते हैं। वहाँ रूखी-सूखी खा लेंगे।" गुरनाम कौर ने अपनी ओर से बड़ी समझदारी की बात की।

निहाल सिंह ने गुरनामो की ओर देखते हुए कहा, "अब वहाँ गाँव में क्या है हमारा! पहले तो भाइयों से कहा-सुनी करके ज़मीन का बंटवारा कर लिया और उसे बेच डाला। तुमने तो टूटे हुए घर के भी पैसे ले लिए थे। अब भाई हमें मुँह नहीं लगाएंगे।

साथ ही, वहाँ के हालात अब यहाँ से भी ज्यादा बुरे हैं। जो लोग वहाँ जाकर आते हैं, वे कानों को हाथ लगाते हैं कि वे फिर से पंजाब वापस नहीं

जाएंगे। नशा बाढ़ की तरह बिक रहा है, रिश्वत के बिना कोई काम नहीं होता। वहाँ अब किसी की कोई सुनवाई नहीं होती। यहाँ हम इज्जत की रोटी तो खा रहे हैं।"

"तो क्या अब पाला अंदर बैठा इज्जत की रोटी खा रहा है?" गुरनामो गुस्से में बोली।

"कभी-कभार ठंडे दिमाग से भी काम ले लेना चाहिए! हम वहाँ से यहाँ हजार गुना बेहतर हैं। दोष तो खुद हमारे में हैं। रहते हम कनाडा में हैं, लेकिन हमारी सोच गाँव वालों जैसी है। हमें खुद को बदलना होगा।" निहाल सिंह ने लंबी साँस भरते हुए कहा।

"हमारी तो जून ही बुरी है। पहले तो मैंने अपने माता-पिता के घर में उनकी डांटें-झिड़कें सहन की, शादी के बाद तुझ जैसे टेढ़े आदमी से वास्ता पड़ गया, रहती कसर खूंसट सास ने पूरी कर दी। मुई जब तक ज़िंदा रही, मुझे चैन से जीने नहीं दिया।" गुरनामो ने दिल की भड़ास निकालते हुए कहा।

निहाल सिंह ने उसकी ओर कटु दृष्टि से देखा और कहा, "तू तो सारा दिन खुद बेबे के साथ लड़ती-झगड़ती रहती थी। अब मरी हुई का भी पीछा नहीं छोड़ती। बात किस विषय पर हो रही है, यह अलग ही दिशा में चल पड़ी।"

गुरनामो इस बात को और बढ़ाना नहीं चाहती थी, इसलिए वह चुप हो गई।

निहाल सिंह भी कुछ देर की खामोशी के बाद धीरे-से अपनी पत्नी को कहने लगा, "देखो, बुद्धिमान लोग कहा करते हैं कि हथेली में रेत रखकर जितना उसे कसोगे, रेत धीरे-धीरे मुट्ठी से बाहर झर जाएगी। बुद्धिमानी इसी में है कि मुट्ठी खुली छोड़ दो। रेत हथेली पर टिकी रहेगी।"

गुरनामो यह सोचने लगी कि आज के बच्चे भी रेत बन गए हैं, जो माँ-बाप द्वारा मुट्ठियाँ कसते ही हाथों से झरने लगते हैं!"

अकाल यूनिवर्सिटी,
तलवंडी साबो-151302 (बठिंडा)
9417692015

आशुकवि सत्यपाल सिंह 'सजग' जी को भावभीनी विदाई

शैलसूत्र के आधार स्तम्भ और लालकुआँ के आशुकवि श्री सत्यपाल सिंह 'सजग' जी को सेंचुरी पेपर मिल लालकुआँ से सेवा निवृति के अवसर पर स्थानीय रचनाकर्मियों द्वारा भावभीनी विदाई दी गई। इस अवसर पर संपर्क भाषा भारती के सम्पादक श्री सुधेंदु ओझा की उपस्थिति सुखद रही।

थरथराती लौ

सुरेश बाबू मिश्रा

रात के नौ बजे थे। शहर में चारों ओर सन्नाटे का आलम था। कभी-कभी सैनिक के बूटों की खट-खट की आवाज़ इस सन्नाटे को तोड़ देती थी। गणतंत्र दिवस के दिन अचानक शहर में साम्प्रदायिक हिंसा भड़क उठी थी, जिसको शान्त करने हेतु सारे शहर में कर्फ्यू लगाना पड़ा। स्थिति नियन्त्रित न होते देख स्थानीय प्रशासन की मदद हेतु सेना बुलाई गयी। आज का यह गणतंत्र दिवस यहाँ सेना और कर्फ्यू की दहशत के बीच ही मनाया गया।

बिजली न होने के कारण चारों ओर घना अंधेरा था। अंधेरा सन्नाटे और दहशत को और भी बढ़ा रहा था। बाहर का यह घना अंधेरा धीरे-धीरे गायत्री देवी के मन पर भी छाता जा रहा था।

वह पलंग पर लेटी हुई थीं। उनके चेहरे पर गहन चिन्ता के भाव थे। पास ही के पलंग पर उनका पन्द्रह वर्षीय नाती विमल लेटा हुआ था। विमल लगभग एक सप्ताह से बीमार था। तीन दिन से कर्फ्यू लगे होने के कारण दवाई नहीं मिल पाई थी जिससे उसकी हालत और बिगड़ गयी थी।

कल से वह लगभग अचेत सा था। बेहोशी में ही वह कभी-कभी बड़बड़ाने लगता। गायत्री देवी की यादें भटकती हुईं अतीत में जा पहुँची। आज से लगभग पैंतालीस वर्ष पूर्व उनकी शादी धीरेन्द्र प्रताप सिंह से हुई थी। उस समय देश में भारत माँ को आज़ाद कराने की लहर तेज़ी से चल रही थी। उनके पति एक प्रखर क्रान्तिकारी थे और स्वतन्त्रता संघर्ष में प्रमुख भूमिका निभा रहे थे।

शादी के बाद प्रथम मिलन की स्मृति गायत्री देवी की आँखों में ताज़ा हो उठी। शादी की पहली रात ही गायत्री देवी के पति ने उनसे कहा था, "गायत्री, भारत माँ अंग्रेज़ों के अत्याचारों से आक्रान्त है। अंग्रेज निरीह भारतीयों का शोषण कर रहे हैं। देश की आधी जनसंख्या भूखी और नंगी है। चारों ओर अनाचार और अत्याचार का साम्राज्य व्याप्त है। भारत माँ की इस दीन-हीन दशा को देखते हुए हम नवयुवकों ने देश को आज़ाद कराने का व्रत लिया है, जिससे समानता पर आधारित समाज की रचना की जा सके। वचन दो गायत्री, तुम मुझे इस कार्य हेतु हमेशा प्रेरणा दोगी और कभी बाधा नहीं बनोगी।"

गायत्री ने सिर झुकाकर उनके पैर छू लिए थे। यही उनकी मौन स्वीकृति थी। गायत्री देवी ने आजीवन इस व्रत का पालन किया था। जब उनके पति धीरेन्द्र सिंह को अन्य क्रान्तिकारियों के साथ फाँसी हुई थी, तब उनका बेटा रमन केवल एक वर्ष का था। जब वह अन्तिम बार अपने पति से मिलने गयीं, तब धीरेन्द्र सिंह ने कहा था, "मैंने अपना जीवन अपने वतन के लिए कुर्बान कर दिया है। मैं अपने देशवासियों को सुखी और समृद्ध देखने की साध मन में लिए जा रहा हूँ। वह दिन भी जल्दी ही आएगा। हो सके तो मेरे पुत्र को मेरे जैसा बनाना मेरी आत्मा तुम्हें स्वर्ग से आशीर्वाद देगी।" यही अपने पति से उनकी अन्तिम मुलाकात थी।

गायत्री देवी को खाँसी आ गई। उन्होंने उठकर थोड़ा पानी पिया। बाहर वही गहरा सन्नाटा पसरा हुआ था। वे फिर पलंग पर लेट गईं। अतीत की कड़ियाँ फिर जुड़ने लगीं। उनके मस्तिष्क में उस समय की घटनाएँ ताज़ा हो उठीं जब सन् 1971 में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया था और देश की सेनाएँ शत्रु को मुँहतोड़ जवाब देने के लिए सीमाओं पर खड़ी थीं, उस सेना की अग्रिम पंक्ति में खड़ा था उनका बेटा रमन और फिर एक दिन समाचार आया-"फ्लाइंग स्क्वेडेंन लीडर रमन दुश्मन के ठिकानों पर बमबारी करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए।"

खबर सुनकर गायत्री देवी स्तब्ध रह गई थीं। रमन की पत्नी रागिनी तीन दिन तक अचेत रही थी। रमन को मरणोपरान्त परमवीर चक्र प्रदान किया गया था। परमवीर चक्र लेते समय गायत्री देवी की आँखें सजल हो उठी थीं। परन्तु उन्हें इस बात का गर्व था कि उन्होंने अपने पति को दिये वचन का पालन किया था।

तभी पलंग पर लेटे विमल ने करवट बदली थी। गायत्री देवी ने उठकर उसको सीने तक चादर उढ़ा दी थी।

विमल रमन का इकलौता बेटा था। प्रसव के समय ही विमल की माँ रागिनी की दर्दनाक मौत हो गयी थी। गायत्री देवी ने ही उसे पाला-पोसा था।

गायत्री देवी ने एक लम्बी त्रासदी को झेला था। 'वैधव्य', 'पुत्र वियोग', 'एकाकीपन' सभी ने आहत किया था गायत्री देवी के मन को। परन्तु उन्होंने अपने को इतना थका या टूटा हुआ कभी अनुभव नहीं किया, जितना इस समय कर रही थीं।

आज सुबह से विमल की हालत काफी चिन्ताजनक थी। वह बार-बार बेहोश हो जाता था। कर्फ्यू के कारण वे उसे कहीं बाहर दिखाने भी नहीं ले जा पाई थीं। वह दोपहर से दो बार डॉक्टर ए. एच. खान को फोन कर चुकी थीं परन्तु शहर के हालातों को देखते हुए उनके आने की सम्भावना कम ही थी।

गायत्री देवी सोचने लगीं-"क्या उनके पति एवं पुत्र द्वारा किया गया बलिदान सार्थक हो पाया है ? भारत माँ पर फिर संकट के बादल गहरा रहे हैं। सम्प्रदायवाद और क्षेत्रीयता की लहर फिर पूरे देश में तेज़ी से फैल रही है। भारत माँ आहत है, अपने ही पुत्रों द्वारा किए गये अत्याचारों से।

वह सोचती हैं कि क्या शहीदों का सपना सार्थक हो पाया है? आम आदमी आज भी आक्रान्त और भयातुर है। सर्वव्यापी भ्रष्टाचार, सुरक्षा के बढ़ने की तरह बढ़ती महंगाई, बेकारों की लम्बी लाइन, दमन, शोषण एवं नैतिक मूल्यों की भारी गिरावट, क्या यही है हमारे स्वतंत्र भारत की वह तस्वीर जिसके लिए हजारों नौजवानों ने अपने प्राण न्यौछावर कर दिये थे?

तभी सैनिकों के बूटों की खट-खट की आवाज़ ने गायत्री देवी के विचारों की शृंखला को भंग कर दिया था। वह उठकर खिड़की से बाहर झाँकने लगीं। सैनिक सड़क पर फ्लैगमार्च कर रहे थे।

नगर पालिका के घड़ियाल ने बारह बजाए थे। रात आधी खिसक चुकी थी, परन्तु नींद गायत्री देवी की आँखों से कोसों दूर थी। नागदंश के समान अनेकों प्रश्न गायत्री देवी के मन में घुमड़ने लगे। वह सोच रही थीं कि सेना देश की सीमाओं की सुरक्षा के लिए है। यदि वह देश की आन्तरिक समस्याओं को ही सुलझाती रहेगी तो कैसे हो पाएगी सीमाओं की सुरक्षा। उन्होंने सोचा कि देश में ऐसी कौन-सी हवा चली है, जिसने भाई-भाई को एक दूसरे का दुश्मन बना दिया है।

तभी विमल के कराहने की आवाज़ ने उनकी सोच को बीच में ही तोड़ दिया था। विमल का सारा शरीर स्पंदनहीन सा होता जा रहा था। सामने रखे दीपक की लौ थरथराने लगी थी। गायत्री देवी ने विमल का सिर अपनी गोद में रख लिया और उस पर हाथ फेरने लगीं। एक भयावह विचार उनके मन में आया कि धार्मिक उन्माद की यह बढ़ती लहर कहीं उनके कुल के आखिरी चिराग को बुझा न दे। क्या यही होगा देशवासियों द्वारा उनके पति और पुत्र द्वारा किये गये बलिदानी का प्रतिफल ?

विमल के लिए कुछ न कर पाने की व्याकुलता उन्हें खाए जा रही थी। वह सोचने लगीं कि डॉक्टर ए.एच.खान से उनके कितने पुराने पारिवारिक सम्बन्ध हैं। परन्तु दो बार फोन करने के बाद भी वह विमल को देखने नहीं आये शायद वह भी शहर की फिजा से प्रभावित हो गये हैं। उन्हें लगा कि विदेशी तत्वों की समाज में दरार डालने की साज़िश धीरे-धीरे कामयाब होती जा रही है।

तभी दरवाज़े पर खट-खट की आवाज़ सुनकर

वह चैंक पड़ी थीं। उन्होंने उठकर नीचे झाँका। दरवाजे पर चार सैनिकों के साथ डॉक्टर ए.एच. खान को देखकर उनके चेहरे पर आशा की नई चमक आ गई थी। उन्होंने उठकर दरवाजा खोला।

सैनिक कुछ जरूरी पूछताछ करके चले गए। गायत्री देवी डॉक्टर साहब को लेकर अन्दर आ गईं।

डॉक्टर साहब बोले, "क्षमा करना बहिन, मुझे आने में देर हो गयी। मैं शाम सात बजे ही घर से चल दिया था, परन्तु पुलिस मुख्यालय से कर्फ्यू पास आदि की कार्यवाही पूरी करने में इतनी देर हो गयी। कहाँ है विमल?"

गायत्री देवी बोलीं, "आप बड़े मौके से आ गये भाई साहब। मैं तो विमल की ओर से निराश ही हो चली थी।"

डॉक्टर साहब विमल का परीक्षण करने लगे। गायत्री देवी बोलीं, ''मेरे विमल को बचा लो डॉक्टर साहब! मैं आपका एहसान कभी नहीं भूलूँगी।"

"कैसी बातें कर रही हो गायत्री बहिन! यह तो मेरा फर्ज है। मेरे लिए विमल और अपने नाती आदिश में क्या फर्क है?"

डॉक्टर साहब ने बैग में से एक इंजैक्शन निकालकर विमल को लगाया। कुछ ही देर बाद विमल के शरीर में स्पन्दन शुरू हो गया। धीरे-धीरे उसने आँखें खोल दीं।

गायत्री देवी के चेहरे पर सन्तोष की छाया झलकने लगी। बाहर हवा कुछ धीमी पड़ गयी थी। इसलिए सामने रखे दीपक की लौ तेज़ होती जा रही थी।

सुबह का फहराया हुआ तिरंगा झंडा शान से लहरा रहा था।

गायत्री देवी सोचने लगीं कि जब तक समाज में डॉक्टर ए.एच. खान जैसे लोग मौजूद हैं तब तक देश की अखण्डता को को मिटा नहीं सकता।

ए-979/3, राजेन्द्र नगर,
बरेली-243122 (उ.प्र.)
मोबाइल नं. 9411422735

विश्वास

रश्मि लहर

सुबह की चाय पीने के बाद सुशीला पति के पास आ बैठी। बड़े ही स्नेहिल भावों से अपने दृष्टिहीन पति मृदुल के दोनों हाथों को अपने हाथ में लेकर यकायक बोली।

''सुनिए! एक बात पूछनी है।''

''पूछो!'' मृदुल ने मुस्कुराते हुए कहा।

''मैं घर-बाहर के सब काम अकेले करती हूँ। इसलिए ही आपको समय बहुत कम दे पाती हूँ, फिर भी आपको कभी गुस्से में नहीं देखा। हमेशा मुस्कुराते रहते हैं आप। आपको कभी शक नहीं होता मुझपर?''

''शक? गुस्सा?? नहीं सुशीला। हमारा रिश्ता तो भरोसे पर टिका है। मुझे तुम्हारी हर आहट से अपनेपन की छुवन मिलती है। तुम्हारी हर साँस से मुझे प्रेम की महक आती है तो गुस्सा कैसे आ सकता है, बताओ?'' मृदुल ने शांत स्वर में कहा।

''और यह विश्वास ही न मेरी मुस्कराहट की वजह है। समझीं तुम??

अब सुशीला के होठों पर भी एक मृदु मुस्कान थी, विश्वास से भरपूर।

सी-8, इक्षुपुरी कालोनी,
लखनऊ-2
7565001657

बहुत देर कर दी -सुदर्शन पटयाल

आज उसे लगा कि वह कितना तुच्छ है। वह महत्वहीन हो गया है, उस अदना से लगने वाले चपरासी के समक्ष। सारा जीवन वह प्रयत्न करने पर भी ऐसा न कर सका जो बलराज ने उसे सिखा दिया था। जिस निर्णय को लेने के लिए वह एक सम्बल बनाना चाहता था, उसे वह आज मिल गया था और वह शीघ्र अति शीघ्र कुछ निर्णय लेना चाहता था।

रमेश ने विवाह से पूर्व एक कल्पना की थी कि उसका एक घर होगा, जिसमें उसकी पत्नी रानी होगी घर की। जब वह थका-मांदा घर लौटेगा तो वह इंतजार करती हुई मिलेगी। वह नौकरी पेशा महिलाओं को देखता तो उसके मन में कुछ घृणा जैसा भाव पैदा होता कि छिः.... 'क्या जिन्दगी है इन औरतों की भी? औरतों की कमाई कैसे खा लेते होंगे मर्द? वगैरह....वगैरह...'

ऐसे ही कुछ विचार थे उसके मन में इन स्त्रियों के लिए। इन घरों में बच्चे कैसे पलते होंगे, कैसी ज़िन्दगी होगी इन सब की???

उसने अपनी मौसी के घर देख लिया था कि कैसा शोर मचा रहता था उनके घर सुबह-सुबह। कोई नाश्ते के लिए चिल्ला रहा है तो कोई गर्म पानी के लिए और बेचारी मौसी इस हड़बड़ी में नौ बजते ही कई बार भूखी ही चल देती सब को खिलाकर। न कपड़े पहनने की सुध, न बाल संवारने की और शाम को जब तक वापस न लौटे क्या मजाल, कोई एक कप चाय भी बनाकर पी ले? न पति और न बच्चे। इधर हमारी माँ के ठाठ हैं, आराम से बिस्तर से उठती है। सब को नाश्ता कराकर आराम से घर के काम निपटाकर आराम करती है और शाम को तरोताजा नजर आती है। कितने प्यार से हमें मिलती है। जब हम थके मांदे वापस लौटते हैं तो हर चीज़ सलीके से रखी हुई मिलती है। कभी भी किसी चीज़ की कमी नहीं थी। ऐसा ही तो वह भी चाहता था अपने घर को बनाना, पर भाग्य की रेखा को कौन बदल सकता है।

अचानक ही एक दुर्घटना में पिता जी की बाजू कट गई थी। घर में कमाने वाला सदस्य ही निरीह हो जाए तो ऐसे में घर की क्या हालत होगी, यह तो कोई मुक्तभोगी ही समझ सकता है। जो महीने में थोड़ा पैसा मिलता भी था तो वह राशन-पानी में खर्च हो जाता था। फिर घर के खर्चे भी बढ़ रहे थे और अभी वही तो बड़ा था जिसने बी.ए. की परीक्षा दी थी। दो भाई-बहन तो अभी स्कूल ही में थे, फिर माता-पिता की दवा-दारू का खर्चा भी था। अब नौकर हटा दिया गया था। माँ को ही सारा काम करना पड़ता था और फिर शाम को वह मशीन रखकर बैठ जाती थी। जितने भी मुहल्ले में लोग थे, सब के कपड़े सिलने आरम्भ कर दिए थे माँ ने। वह यह सब देखता तो मन मसोस कर रह जाता। मन ही मन संकल्प करता कि शीघ्र ही ऐसी नौकरी करेगा कि सारे दुख दूर हो जाएँ। लेकिन यथार्थ की चोटें सह-सहकर उसके सब सपने धरे के धरे रह गए। कई जगह साक्षात्कार देने के बाद जब एक क्लर्क के स्थान पर नियुक्ति हुई तो उसने उसी को गनीमत समझा।

वह भी कोई समय था जब वह क्लर्क की नौकरी को हेय समझता था, पर अब उसे इसी पर संतोष करना पड़ा। अभी नौकरी लगे एक वर्ष भी न हुआ था कि शादी के प्रस्ताव आने लगे। एक वर्ष तक

तो वह टालता रहा था पर एक प्रस्ताव को लेकर तो माता-पिता अड़ ही गए। लड़की स्कूल में लेक्चरार थी, यही योग्यता काफ़ी समझी गई थी रिश्ते के लिए, आखिर उसे मानना ही पड़ा। नौकरी पेशा पत्नी से उसे मूल-भूत घृणा थी पर अब वही मौसी के घर वाला वातावरण बन गया था अपने घर में भी।

वह अभी भी प्रयत्नशील था कि अपनी शैक्षणिक योग्यता को बढ़ा ले और पत्नी की नौकरी छुड़ा दे। इसीलिए पढ़ाई में लगा रहता था इसीलिए चाहते हुए भी वह दूसरों की मदद नहीं कर पाता था। कुछ संस्कार ही ऐसे थे कि पत्नी के साथ काम नहीं करवाना आठवां आश्चर्य था। दूसरी ओर वह माँ और छोटे बहन-भाइयों के सामने कमजोर भी नहीं पड़ना चाहता था।

धीरे-धीरे घर में दो नए जीव भी आ गए थे। लेकिन उषा (उसकी पत्नी) बीमार रहने लगी। कोई न कोई बीमारी उसे लगी ही रहती लेकिन उसने कभी भी पत्नी की ओर इतना ध्यान नहीं दिया कि वह खाना भी ठीक से खाती है या नहीं। उसे आराम मिलता है या नहीं? वैसे वह सोचता अवश्य था कि यदि उषा की आय न होती तो घर कैसे चलता? मशीन की तरह लगी रहती है वह रात-दिन।

इसी दौरान उसने एच.ए.एस. की परीक्षा भी पास कर ली तथा वह अच्छी पोजीशन पर पहुँच गया। पदोन्नति के साथ घर का स्तर भी बदलना पड़ता है। भाई भी इंजीनियरिंग कॉलेज में आ गया था और बहन की शादी भी कर दी थी। घर में अब सभी कुछ आ गया था। केवल घर की ही कमी थी। पर मनुष्य की इच्छाएँ तो कभी पूरी नहीं होतीं।

इधर उषा का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता जा रहा था पर रमेश को फ़ुर्सत कहाँ थी कि उसे डॉक्टर के पास ले जाए। यदि वह कभी कहता भी तो उषा को छुट्टी लेने की समस्या होती। वैसे वह कई बार कह चुकी थी कि उसे पढ़ाते समय चक्कर आ जाता है लेकिन किसी ने भी इस बात को गम्भीरता से नहीं लिया। सर में दर्द तो उसे बहुत ही उठता था, कभी-कभी उल्टी भी हो जाती और सर दर्द के मारे फटने लगता।

रमेश का मन होता कि अब तो अच्छा कमा रहा हूँ, इसकी नौकरी छुड़ा ही दूँ, फिर सोचता कि 15 साल की नौकरी हो गई है, पाँच साल और कट जाएँ तो 25 वर्ष का लाभ मिल जाएगा। अच्छी पेंशन मिल जाएगी। बस इसी उधेड़-बुन में समय गुजरता जा रहा था। माँ की मृत्यु के बाद घर का ढांचा तो और भी चरमरा गया था। उषा पर अब और भी जिम्मेदारी आ गई थी। माँ के होते बच्चों की चिन्ता नहीं थी पर अब तो दिन-प्रति-दिन बच्चे भी समस्या बनते जा रहे थे। किशोरावस्था में बच्चों पर माँ-बाप का अंकुश तो होना ही चाहिए, पर जब दोनों ही व्यस्त हों तो बच्चों को सँभालने का समय कहाँ? एक दिन जब उसने बृज के बस्ते में से बीड़ी का बण्डल निकाला तो वह चिल्ला ही उठा था, ''यह बण्डल कहाँ से आया?'' के साथ बेटा कुछ बोलता उससे पहले ही लात-घूसों से उसकी मरम्मत कर दी। उषा छुड़ाने आई तो उस पर बरस पड़ा,

''तुम माँ होकर भी इसकी आदतों को चैक नहीं कर सकतीं?'' इसके साथ ही बृज को लगने वाला घूंसा उषा की कनपटी पर लगा और वह हाय माँ कहकर वहीं गिर पड़ी।

एक घ्ण्टे बाद जब उसे होश आया तो डॉक्टर ने उन लोगों को चेतावनी देते हुए कहा कि उसे मानसिक और शारीरिक दोनों ही तरह से आराम की जरूरत है, अन्यथा गम्भीर परिणाम हो सकते हैं।

फिर कई दिन गुजर गए, सब कुछ पहले की ही तरह चल रहा था। आज ऑफिस में सुबह-सुबह ही मिठाई बंट रही थी। खुशी का माहौल था, सभी मि. सिन्हा को बधाई दे रहे थे। उनकी पत्नी की नौकरी

लग गई थी। कोई कह रहा था,

''बहुत लकी हैं आप मि. सिन्हा। आपको ऐसी पत्नी मिली है, सब तरह से सुघड़ है। घर भी ऐसा सजा-सजाया रहता है, बच्चे भी पढ़ने में होशियार हैं। पत्नी की नौकरी लग गई, अब तो दो-दो कमाने वाले हो गये। बस मौज ही मौज है।

मि. सिन्हा मारे प्रसन्नता के फूले नहीं समा रहे थे इन कम्प्लीमेंटस् को पाकर। उधर रमेश अपने कमरे में सिर पर हाथ रखे कल की घटना पर विचार कर रहा था। उसे घर का ढांचा बिगड़ता हुआ साफ नज़र आ रहा था। क्या करे....? उषा की नौकरी छुड़ा दे क्या? अभी वह इसी उधेड़-बुन में था कि उसे साथ के कमरे में कप-प्लेट धो रहे बलराज की आवाज़ सुनाई दी, जाने किस से कह रहा था वह,

''ऊँह! बड़े खुस होया करदे, जिंयां बड्डा तीर मारी लेया। जनाना ही तां लग्गी नौकरी। क्या जमाना आई गेया!! शर्मा ने डुब्बी नीं मरदे। मर्दा रे हुंदेया जनाना ही लग्गी कमाणा। एड्डा अफसर लगेया कने खुस होआ करदा जनाना री नौकरिया पर। हाऊँ तां मरी जाऊँ पर जणासा री कमाई कदी नी खाऊँ। असें गरीब ही सही अपर इज्जतदार तां है। इन्हां ते लक्ख गुणा खरे।''

फिर थोड़ा रुककर दोबारा बोलने लगा था, ''क्या हाल है रमेश बाबुए रे घरे रा? तिहाड़ी मैं सौदा देणा गेया.....घरा री हालत दिक्खी ने रोणा आई गेया। खरे बसदे घरा बिच जींयां उल्लू बोल्या दे। दिन-दिहाड़े घरा उल्लू बोल्या दे। कोई घरा जनाना नीं, ना किसी दी पुच्छ न गिछ.....।

इससे अधिक रमेश से सुना नहीं गया। उसने अपने कानों में उंगलियाँ ठूंस लीं। तुरन्त ही एक दिन की छुट्टी का आवेदन किया और कार लेकर सीधे उषा के स्कूल पहुँच गया उससे त्यागपत्र लिखवाने, लेकिन स्कूल के गेट के पास ही उसे स्कूल की आया रोती हुई मिल गई।

''बाबू जी! उषा बहिन जी तो हमें छोड़ कर चली गईं बहुत दूर। उन्हें सिर में जबरदस्त दर्द हुआ और एम्बुलेंस आने से पहले ही वे चली गईं। बच्चों को छुट्टी दे दी है और कुछ लोग बॉडी के साथ आपके घर गए हैं। आपको फोन लगा रहे थे पर किसी ने उठाया नहीं। अब मुख्य अध्यापिका के साथ कुछ लोग आपके दफ्तर गये हैं आपको बुलाने।''

रमेश को लग रहा था कि उषा के त्यागपत्र का निर्णय भी वह नहीं कर सका। वह स्वयं ही त्यागपत्र देकर चली गई है। मानो अंतिम अहसान भी वह रमेश का नहीं लेना चाहती थी। जो सारी जिन्दगी उसे एक दिन के लिए भी आराम नहीं दे सका, लेकिन यह क्या संयोग था कि जिस समय रमेश ने उसे मुक्त करने का निर्णय लिया उसी समय उसने दम तोड़ दिया। शायद वह अन्तिम विदा भी उसकी अनुमति से ही लेना चाहती थी।

रमेश सिर पकड़कर वहीं बैठ गया, कार के डैशबोर्ड पर रखा त्यागपत्र का लिफाफा उसका मुँह चिढ़ा रहा था।

18, हाउसिंग बोर्ड सोसाइटी,
जाखू, शिमला (हि.प्र.)

हिन्दी भाषा और विराम चिह्न

- डॉ. विजय कुमार सिंघल

किसी भी भाषा में विराम चिह्नों का बहुत महत्व होता है। ये लिखी गयी बात का अर्थ स्पष्ट करने में बहुत सहायता करते हैं। गलत विराम चिह्न के उपयोग से अर्थ का अनर्थ हो सकता है लेकिन खेद है कि अनेक धुरंधर रचनाकार भी अपनी रचनाओं में इनका पूरा ध्यान नहीं रखते। यहाँ हम सामान्य रूप में होने वाली गलतियों और उनके निराकरण के बारे में लिख रहे हैं।

पूर्ण विराम- यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इसी से पता चलता है कि कोई वाक्य कहाँ से प्रारम्भ होकर कहाँ पर समाप्त हो रहा है। अनेक लेखक इसकी उपेक्षा करते हैं और कहीं पूर्ण विराम लगाये बिना लिखते चले जाते हैं। यह अनुचित है। हमें पूर्ण विराम का उपयोग अवश्य करना चाहिए। पूर्ण विराम के लिए हिन्दी में एक खड़ी लकीर या पाई (।) का प्रयोग किया जाता है। अधिकांश हिन्दी कीबोर्डों में इसके लिए व्यवस्था होती है। जहाँ पूर्ण विराम का बटन न हो, वहाँ एक बिन्दु या डॉट (.) का प्रयोग पूर्ण विराम के लिए किया जा सकता है। लेकिन इन दोनों के अलावा किसी चिह्न का प्रयोग पूर्ण विराम के लिए करना उचित नहीं है, जैसे- कैपीटल आई (□), छोटी एल (□), तीन या अधिक लगातार बिन्दु (....), लम्बी खड़ी लकीर (।), विस्मयादिबोधक चिह्न (!) आदि। इनसे सम्पादक को खीझ हो जाती है।

अर्द्ध विराम (कॉमा) अर्द्ध विराम भी बहुत महत्वपूर्ण है। इसका उपयोग दो वस्तुओं या वाक्यांशों को अलग-अलग दिखाने के लिए किया जाता है। जैसे- राम, श्याम और मोहन खेल रहे हैं। यहाँ राम के बाद कॉमा लगाया गया है और उसके बाद एक स्पेस देकर अगला शब्द टाइप किया गया है। यही कॉमा का सही उपयोग है। कई लोग इसमें मनमानी कर जाते हैं और राम के बाद के बजाय श्याम से पहले कॉमा लगा देते हैं या कॉमा के बाद स्पेस नहीं देते या आगे-पीछे दोनों जगह स्पेस दे डालते हैं। ऐसी गलतियाँ नहीं करनी चाहिए।

रिक्त स्थान (स्पेस) बहुत से रचनाकार स्पेस का भी घोर दुरुपयोग करते हैं। वे वाक्य में कहीं भी एक साथ दो या अधिक स्पेस दे देते हैं या कई बार दो शब्दों के बीच भी स्पेस नहीं देते। इसलिए ध्यान रखिए कि हर वाक्य में दो शब्दों के बीच स्पेस देना और हर पूर्ण विराम तथा अर्द्ध विराम के बाद स्पेस देना आवश्यक है।

कोष्ठक लगाते समय हमें प्रारम्भिक कोष्ठक चिह्न से पहले और अन्तिम कोष्ठक चिह्न के बाद स्पेस अवश्य देना चाहिए। इसके विपरीत कहीं स्पेस देना गलत होता है। उदाहरण के लिए- हमारे अंकल (मेरे ताऊ) कल आयेंगे। यह कोष्ठक और स्पेस का सही उपयोग है।

संदर्भ चिह्न- अनेक रचनाकार संदर्भ चिह्नों का भी मनमाना उपयोग करते हैं या करते ही नहीं। अनेक कहानी लेखक संवादों को संदर्भ चिह्नों में रखे बिना लिखते चले जाते हैं। इससे यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि किसकी बात कहाँ से शुरू और कहाँ खत्म हो रही है। इसलिए हमें सभी संवाद अलग-अलग करने के लिए संदर्भ चिह्नों का उपयोग करना चाहिए। एकल (‘ ’) या युगल (“ ”) संदर्भ चिह्नों में कोई अन्तर नहीं है, लेकिन यदि संवाद के भीतर संवाद हो, तो बाहरी संवाद के लिए युगल और भीतरी संवाद के लिए एकल संदर्भ चिह्न लगाने चाहिए। इन पर भी स्पेस के नियम कोष्ठकों की तरह लागू होते हैं अर्थात् प्रारम्भिक संदर्भ चिह्न से

पहले और अन्तिम संदर्भ चिह्न के बाद स्पेस अवश्य देना चाहिए।

संदर्भ चिह्नों का प्रयोग उपनाम लिखने में भी किया जाता है, जैसे- तूफान सिंह 'उग'। यह सही तरीके से लिखा गया है। यहाँ कुछ प्रमुख विराम चिह्नों के उपयोग की ही संक्षिप्त चर्चा की गयी है। इनका पालन करने से आपकी रचना में निखार आता है। इसलिए इनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

देवनागरी लिपि की विशेषता इसकी मात्राएँ हैं। इन्हीं मात्राओं में नागरी लिपि और हिन्दी भाषा की शक्ति छिपी हुई है। केवल 12 मात्राओं और 36 व्यंजनों में मानव वाणी के सभी सम्भव स्वर समाये हुए हैं। इसलिए किसी भी भाषा को कोई भी शब्द नागरी लिपि में अधिकतम शुद्धता के साथ लिखा जा सकता है।

यह इसकी विशेषता है कि कोई शब्द जिस तरह उच्चारित किया जाता है, ठीक उसी तरह लिखा भी जाता है। लिखने और बोलने में कहीं कोई विषमता है ही नहीं, जैसी कि अन्य अनेक लिपियों और भाषाओं में पायी जाती है। इसलिए इसमें किसी शब्द की वर्तनी रटने की कोई आवश्यकता ही नहीं है, यदि आपको उसका सही-सही उच्चारण करना आता हो।

फिर भी खेद का विषय है कि साधारण जन ही नहीं, वरन् बड़े-बड़े धुरंधर लेखक तक हिन्दी लिखते समय वर्तनी की विशेषतया मात्राओं की गलतियाँ करते हैं और इस बात पर उन्हें कोई खेद होता भी प्रतीत नहीं होता। मुख्य रूप से छोटे स्वर और बड़े स्वर की मात्रा लगाने में बहुत मनमानी होती है। किसी भी मात्रा को कहीं भी लगा देना कई रचनाकारों की आदत है, जिसे सुधारने की बहुत आवश्यकता है।

यह घोर आश्चर्य की बात है कि अधिकतर रचनाकार 'कि' और 'की' शब्दों का अन्तर नहीं जानते और किसी का भी कहीं भी उपयोग या दुरुपयोग कर लेते हैं। उन्हें समझना चाहिए कि 'की' अंग्रेजी शब्द 'ऑफ' का एक हिन्दी स्त्रीलिंग पर्याय है, जबकि 'कि' शब्द अंग्रेजी के 'दैट' शब्द का समानार्थी है।

इसी तरह बहुत से रचनाकार ओर-और, में-मैं, है-हैं, बहार-बाहर आदि शब्दों में अन्तर नहीं करते। ऐसे रचनाकारों को चाहिए कि वे एक हिन्दी शब्दकोश खरीद लें और कहीं भ्रम होने पर उसमें सही वर्तनी देखकर उपयोग में लायें। जब 'हूँ' की जगह 'हुँ', 'ऊर्जा' की जगह 'उर्जा' लिखा हुआ दिखायी देता है, तो पाठक अपना सिर पीटने के अलावा कुछ नहीं कर सकता।

इसलिए अपनी श्रेष्ठ भाषा और सर्वश्रेष्ठ लिपि के हित में हमें मात्राओं की गलतियाँ करने से बचना चाहिए, ताकि अपने लेखन को त्रुटिमुक्त बनाया जा सके।

संपादक
जय-विजय ई पत्रिका

धर्मवीर भारती के उपन्यास 'गुनाहों का देवता' में सामाजिक आदर्श

-डॉ. प्रवीण ठाकुर

'कनुप्रिया', 'ठंडा लोहा', 'अंधा युग', 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' तथा 'गुनाहों का देवता' जैसी बहुचर्चित एवं कालजयी कृतियों के रचयिता धर्मवीर भारती का नाम हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकारों में गिना जाता है। धर्मवीर भारती एक अनुभवी साहित्यकार थे जिसका प्रमाण हमें इनकी रचनाओं का अध्ययन करने से भली-भांति मिल जाता है। साहित्य की विविध विधाओं में धर्मवीर भारती ने सफलता प्राप्त की है।

धर्मवीर भारती का जन्म 26 सितंबर सन 1926 की इलाहाबाद के अतरसुइया मुहल्ले में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम चिरंजीव लाल वर्मा और माता का नाम चंदादेवी था। धर्मवीर के बाबा का नाम एवज राम था जो एक दबंग जमींदार थे तथा हमेशा उनके साथ एक व्यक्ति बंदूक लेकर चलता था। भारती जी के बचपन का नाम 'बच्चन' था, परंतु वास्तविक नाम धर्मवीर भारती ही था। हाँ! स्कूल के दिनों में बच्चन ने अपने नाम के आगे 'भारतीय' लगाना शुरू कर दिया था। आगे चलकर यही 'भारतीय' शब्द 'भारती' में रूपांतरित हो गया। भारती जी ने प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही ग्रहण की। जब आठवीं में पढ़ रहे थे तो पिता जी का आकस्मिक देहांत हो गया। पिता जी के आकस्मिक देहांत होने के कारण इन्हें प्राय: गरीबी से जूझते हुए देखा गया। सन 1945 में गरीबी से जूझते हुए धर्मवीर भारती ने स्नातक की परीक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय से ग्रहण की।

हिन्दी में सर्वाधिक अंक ग्रहण करने के कारण इन्हें 'चिंतामणि घोष मण्डल' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इससे भारती के मन में अध्यापन के प्रति रुचि का विकास हुआ। एम. ए. हिन्दी की पढ़ाई करते समय पदमकांत मालवीय द्वारा संपादित 'अभ्युदय' नामक दैनिक पत्र में पत्रकारिता को अपनाया जिससे इनकी पढ़ाई का खर्च आराम से निकलने लगा। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन में 'सिद्ध साहित्य' पर शोध किया तथा पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। धर्मवीर भारती की पढ़ाई मात्र पुस्तकों तक ही सीमित नहीं थी। कविता पढ़ने का शौक बचपन से ही था तथा अँग्रेजी उपन्यास भी पढ़ने का शौक था।

आजीविका उपार्जन हेतु धर्मवीर भारती सन 1948 में पंडित जोशी के पत्र 'संगम' में बतौर सहकारी संपादक नियुक्त हुए। दो वर्ष तक संपादक के रूप में कार्य करने के उपरांत सन 1950 में धर्मवीर की नियुक्ति प्राध्यापक के रूप में प्रयाग विश्वविद्यालय में हो गयी। दस वर्ष तक प्राध्यापक के रूप में सेवाएँ देने के उपरांत सन 1960 में 'धर्मयुग' के संपादक बन गए और मुंबई चले आए। वर्ष 1961 में कमान वेलम रिलेशन कमेटी के निमंत्रण पर सर्वप्रथम इंग्लैंड और यूरोप की यात्रा की। वर्ष 1966 में भारतीय दूतावास से मेहमान के रूप में इंडोनेशिया एवं थाईलैण्ड की यात्राएँ भी कीं। सन 1971 में मुक्तिवाहिनी के सहयोग से बंग्लादेश तथा 1978 में सरकार की ओर से चीन जाने का निमंत्रण प्राप्त हुआ ।

धर्मवीर भारती का प्रणय जीवन संघर्षमयी रहा। यही कारण है कि 'गुनाहों का देवता' उपन्यास को

उनके जीवन के संघर्ष की अभिव्यक्ति माना जाता रहा है। धर्मवीर के मित्र नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल ने एकबार ज्योतिषी परमानंद शुक्ल से इस विषय में पूछा तो शुक्ल जी ने भारती की जन्मपत्री देखकर बताया था-''भाई! इनकी राशि में कुम्भ और सूर्य भाग्येश होकर इनके लग्न में जा बैठा है। इसे मान, प्रतिष्ठा, धन, पद की कोई कमी नहीं है। राजयोग भी है। इसमें जहाँ एक ओर उत्साह, परम सक्रियता की भावना, सौभाग्य, यश, उन्नति है, वहाँ यह सदैव शरीर से रोगी रहेगा। इसका शुक्र मकर का है, मित्र क्षेत्री है। चंद्रमा से बारहवाँ योग कर रहा है। शुक्र है प्रेम का देवता, चंद्रमा है काम का देवता। अत: प्रेम में संघर्ष, अशांति, बौखलाहट का योग है।"[1] यह बात सच्ची निकली। भारती के जीवन में प्रेम और संघर्ष की तीव्रता रही। युवावस्था में किसी किशोरी से प्रणय संबंध हुआ था परंतु सामाजिक वर्जनाओं के कारण प्रेम विवाह में परिवर्तित नहीं हो सका।

वर्ष 1945 में धर्मवीर भारती का विवाह पंजाबी शरणार्थी लड़की कांता कोहली से संपन्न हुआ था। इस विवाह से भारती को एक बेटी हुई 'पारमिता' जिसे प्रेम से धर्मवीर भारती 'केका' कहते थे। संस्कारों के तीव्र वैषम्य के कारण यह विवाह सफल न हो सका। असफलता का कारण शायद पहला प्यार या संस्कार रहा। सामाजिक मर्यादाओं के कारण प्रेयसी पत्नी न बन सकी और पत्नी जीवन साथी न बन सकी। परिणामस्वरूप भारती के प्रणय जीवन में एक अन्य नारी का प्रवेश हुआ जिसका नाम पुष्पा शर्मा था। सन 1960 में इन्होंने पहली पत्नी से सबंध-विच्छेद करके पुष्पा शर्मा के साथ शादी कर ली। पुष्पा शर्मा से उन्हें एक बेटा और एक बेटी हुई। बेटे का नाम 'किंशुक' और बेटी का नाम 'प्रज्ञा' रखा। कांता कोहली ने भी दूसरी शादी कर ली। धर्मवीर का बेटा 'किंशुक भारती' अमरीका में बस गया और वहीं उसने आयरिश लड़की से शादी कर ली। छोटी बेटी 'प्रज्ञा भारती' (जिसे भारती प्यार से 'गुड़िया' कहते थे) का विवाह नेपाली मूल के लड़के से हुआ। बड़ी बेटी 'केका' और दामाद कलकता में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मृदुभाषी पुष्पा से धर्मवीर भारती का जीवन सुखमय रहा। पुष्पा से भारती बहुत प्रेम करते थे जिसका प्रमाण विष्णुकांत की इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है, "वे उस दिन बहुत चिंतित थे पुष्पा की नकसीर फूटने के कारण। पुष्पा चुपचाप पड़ी थी। पिछले दिनों से पुष्पा पर बहुत ज्यादा अवलंबित हो गए थे। मैंने कहा प्रभु कृपा से पुष्पा शीघ्र स्वस्थ हो जाएगी। पर वे छोटे बच्चे की तरह विचलित लगे।"[2]

अस्वस्थता ने धर्मवीर भारती को शारीरिक और मानसिक रूप से क्षीण कर दिया था। जीवन और मृत्यु की निकट आती-जाती छाया के कारण उनकी व्यथा गहरी होती जा रही थी। परिणामस्वरूप 4 सितंबर सन 1997 को धर्मवीर भारती का देहावसान हो गया। विष्णुकांत उनकी मृत्यु पर लिखते हैं, "देह त्याग के बाद वे एक लंबी यात्रा पर चले गए।"[3]

धर्मवीर का लेखन बहुमुखी रहा जिसके कारण इन्हें समय-समय पर पुरस्कार भी प्रदान किए गए। सन 1972 में पद्मश्री, सन 1988 में संगीत नाट्य पुरस्कार, सन 1989 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सम्मान पुरस्कार, सन1990 में भारत-भारती, तथा सन् 1990 में ही महाराष्ट्र गौरव, सन 1991 में साधना पुरस्कार आदि भी इन्हें प्रदान किए गए।

काव्य के क्षेत्र में ठंडा लोहा, सात गीत वर्ष, सपना अभी भी तथा कनुप्रिया इनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं। 'अंधायुग' का स्वरूप काव्य नाटिका का है, जो उन्होंने सन 1972 में लिखा। उपन्यास विधा के तहत 'गुनाहों का देवता' लोकप्रिय उपन्यास है, जिसका लेखन एवं प्रकाशन सन 1959 में हुआ।

दूसरा उपन्यास 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' है जिसका प्रकाशन सन 1963 है। कहानी संग्रह के रूप में 'मुर्दों का टीला' (1946), 'बंद गली का आखिरी मकान', चाँद और टूटे हुए लोग (1955) तथा स्वर्ग और पृथ्वी प्रमुख हैं। निबन्ध विधा के तहत 'ठेले पर हिमालय', 'पश्यंती', 'कहनी-अनकहनी', प्रमुख निबंध संग्रह हैं। एकांकी संग्रह के रूप में 'नदी प्यासी थी' लोकप्रिय एकांकी संग्रह है जिसमें पाँच एकांकियों का संकलन है तथा इसका प्रकाशन वर्ष 1955 है।

'गुनाहों का देवता' धर्मवीर भारती द्वारा लिखित लोकप्रिय उपन्यास है। उपन्यास का प्रकाशन वर्ष 1959 है। उपन्यास की कहानी धर्मवीर भारती के जीवन की वास्तविक घटनाओं से जुड़ी है। उपन्यास के आरंभ में भारती जी लिखते हैं,

''मेरे लिए इस उपन्यास का लिखना वैसे ही है जैसे पीड़ा के क्षणों में पूरी आस्था के साथ प्रार्थना करना और इस समय भी मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं वह प्रार्थना मन-ही-मन दोहरा रहा हूँ, बस....।''[4] उपन्यास की कहानी हालांकि सामाजिक दृष्टि से सफल रही है किन्तु प्रेम की दृष्टि से असफल प्रेम कहानी रही है। यही कारण है कि आधुनिक समय में इस उपन्यास को पढ़ने वाला युवक अपने आप को चंदर तथा युवती अपने आप को सुधा मानना शुरू कर देते हैं। 'पाना ही प्रेम नहीं अपितु खोना भी प्रेम है।' इस संदेश की अभिव्यक्ति इस उपन्यास के माध्यम से हुई है।

उपन्यास का आरम्भ प्रोफ़ेसर शुक्ला के परिवार से होता है। चंदर और सुधा उपन्यास के केंद्रीय पात्र हैं। चंदर, प्रोफ़ेसर शुक्ला के निर्देशन में पीएच. डी. अर्थशास्त्र का विद्यार्थी होता है और सुधा प्रो. शुक्ला की इकलौती बेटी है। चंदर अपने व्यक्तित्व के आकर्षण के कारण डॉ. शुक्ला से इतना घुलमिल जाता है कि शुक्ला उसे छात्र कम बेटा अधिक मानने लग जाता है। डॉ. शुक्ला की बेटी सुधा में एक भारतीय नारी के समस्त गुण मौजूद हैं। इन गुणों के कारण चंदर का सुधा से आत्मीय लगाव हो जाता है। किन्तु यह आत्मीय लगाव चंदर अभिव्यक्त नहीं कर पता। इसका एकमात्र कारण सामाजिक आदर्श होता है। इसी सामाजिक आदर्श के तहत चंदर सुधा को कैलाश मिश्रा से शादी करने के लिए बाध्य कर देता है। सुधा के मना करने पर वह उसे थप्पड़ भी मारता है, किन्तु सुधा में समर्पण भाव को देखकर पाठक भावुक हो उठता है,

''चंदर का हाथ तैश में उठा और एक भरपूर तमाचा सुधा के गाल पर पड़ा। सुधा के गाल पर नीली उँगलियाँ उभर आयीं। वह स्तब्ध। जैसे पत्थर बन गई हो। आँखों में आँसू जम गए। चंदर ने एक बार सुधा की ओर देखा और कुर्सी पर जैसे गिर पड़ा और सिर पटक कर बैठ गया। सुधा कुर्सी के पास जमीन पर बैठ गई। चंदर के घुटनों पर सिर रखकर भारी आवाज में बोली,

''चंदर, तुम्हारे हाथ में चोट तो नहीं आई।''[5] समर्पण भाव का इतना बड़ा उदाहरण साहित्य में अन्यत्र मिलना मुश्किल है। शायद इससे बड़ा कोई सामाजिक आदर्श हो।

चंदर के मजबूर करने पर सुधा कैलाश मिश्रा से शादी तो कर लेती है किन्तु चंदर के आत्मीय व्यवहार को नहीं भुला पाती है। जब चंदर उसके साथ कठोर व्यवहार करने की कोशिश करता है तो वह चंदर के लिए अपने शरीर को न्यौछावर करने तक को भी तैयार हो जाती है। गर्भधारण करने के उपरांत व्रत उपवास करती है। परिणाम स्वरूप डेलीरियम (सन्निपात) रोग से ग्रस्त हो जाती है। किन्तु मृत-शैया पर लेटे-लेटे भी चंदर को बुलाती और कहती है-

''मैं झुक नहीं सकती, विनती.... .... यहाँ आओ-हाँ! चंदर के पैर छू.....अरे अपने माथे पर नहीं

पगली मेरे माथे पर लगा दे। मुझ से झुका नहीं जाता।''

विनती ने रोते हुए सुधा के माथे पर चरणधूल लगा दी।"[6] इस प्रकार सुधा का समर्पण भाव सामाजिक आदर्श के रूप में उभरकर सामने आया है। इसके साथ ही उसका त्यागमयी, सेवा भाव, भावुकता और दयाभाव भी अपने आप में महान है। वह मात्र चंदर के प्रति ही सेवाभाव नहीं रखती है अपितु अपने पिता डॉ. शुक्ला के प्रति भी सेवाभाव रखती है। जब चंदर उसकी जबरन शादी करवा देता है तो शादी के उपरांत वह चंदर को समझाते हुए कहती है , "देखो विनती का ध्यान रखना। उसे तुम्हारे ही भरोसे छोड़ रही हूँ और सुनो, पापा को रात को सोते वक्त दूध में ओवल्टीन जरूर दे देना। खाने-पीने में गड़बड़ी मत करना, यह मत समझना कि सुधा मर गयी है तो फिर दूध की चाय पीने लगे। हम जल्दी से आ जाएंगे।"[7] इस प्रकार उपन्यास की सुधा सामाजिक आदर्श के रूप में प्रस्तुत हुई है।

उपन्यास का पुरुष पात्र चंदर बुद्धिमान, भावुक होते हुए भी आदर्शवादी रोमांटिक युवक है। वह प्रेम करना अच्छा तो मानता है किन्तु समाज से डरता भी है। एकबार डॉ. शुक्ला से प्रेम विवाह पर चर्चा करते हुए अपने विचार व्यक्त करता है,

"हाँ! प्रेम विवाह अक्सर असफल होते हैं, लेकिन संभव है वो प्रेम विवाह न होता हो। जहाँ सच्चा प्रेम होगा, वहाँ कभी असफल विवाह नहीं होंगे।"[८] चंदर एक भावुक युवक भी है। जब सुधा के लिए कैलाश का रिश्ता आता है तो वह भावुक हो जाता है और कहता है,

"मैं सोच रहा हूँ आज कितना संतोष है मुझे, कितनी खुशी है मुझे, कि सुधा ऐसे घर जा रही है जो इतना अच्छा है, ऐसे लड़के के साथ जा रही है जो इतना ऊँचा है कहते-कहते चंदर की आँख भर आई।"[9] वास्तव में चंदर उन युवकों का प्रतिनिधित्व करता है जो प्रेम को आंतरिक अनुभूति तो मानते हैं, किन्तु उसकी चरम समाप्ति शादी ही हो, यह आवश्यक नहीं मानते। यही कारण है कि वह सुधा को कैलाश मिश्रा से शादी करने पर मजबूर करता है किन्तु वह यह क्षण भर के लिए भी नहीं सोचता कि जो सुधा उसे देवता मानती है, उससे वह रंच भर भी न्याय नहीं कर पाता है। चंदर, समाज और सुधा के लिए आदर्श पात्र हो सकता है किन्तु एक बुद्धिजीवी पाठक के लिए उसका आदर्श मात्र एक औपचारिकता ही नजर आता है।

जब वह सुधा की कैलाश मिश्रा से ज़बरन शादी करवा देता है तो उस समय वह अकेलेपन का शिकार हो जाता है। पवित्र मार्ग से भटके चंदर को पामिल डिक्रूज (पम्मी) वासना के दलदल में डुबो देती है। किन्तु पम्मी और चंदर का साथ भी लंबे समय तक नहीं चल पाता है। परिणामस्वरूप पम्मी भी चंदर के देवत्व बनाम आदर्श से तंग आकर उसे शादी करने के लिए कहती हुई एक पत्र छोड़कर उससे दूर चली जाती है। वह उसे समझाती है,

"मैं न अपने को गुनाहगार मानती हूँ, न तुम्हें, फिर अगर तुम मेरी एक सलाह मान सको तो मान लेना। किसी अच्छी सीधी-सादी हिन्दू लड़की से अपना विवाह कर लेना। किसी बौद्धिक लड़की से जो तुम्हें प्यार करने का दम रखती हो उसके फंदे में मत फँसना।[10]

आदर्शों की दुहाई देने वाला चंदर स्वय गर्त में गिर जाता है और गुनाहों की कड़ी-दर-कड़ी तैयार करने लगता है। पम्मी की मांसलता से भी उसे तृप्ति नहीं मिलती है, वह विनती एवं सुधा को भी अपने गुनाहों में खींचना चाहता है, जोकि उसका मानना है,

"जब अंगों का तूफान एकबार उठना सीख जाता है तो दूसरी बार उसे उठने में देर नहीं लगती है।"[11] उपन्यास में शुरू से अंत तक वह मानसिक दृष्टि से

विक्षिप्त ही नजर आता है। शैक्षिक दृष्टि से वह डॉक्टरेट जरूर है किन्तु उसका व्यक्तित्व पाठक से कोई संवेदना नहीं ले पाता है। उपन्यास के अंत में जब चंदर और विनती सुधा की अस्थियाँ प्रवाहित करने के लिए गंगाघाट जाते हैं तो विनती के भावुक होते ही चंदर फिर मानसिक विक्षिप्त हो जाता है,

"नहीं चुप होगी?'' चंदर ने पागलों की तरह कहा और विनती को धकेल दिया। विनती ने बांस पकड़ लिया और चीख पड़ी। चीख से जब चंदर को होश आता है तो चंदर के आँसू छलक आते हैं। वह उससे कहता है,

''चुप हो जाओ रानी। मैं अब इस तरह कभी नहीं करूँगा, उठो। अब हमी को ही तो निभाना है - विनती।'' चंदर ने तख्त पर छीना झपटी में बिखरी हुई राख़ उठाई और विनती की मांग में भरकर मांग चूम ली। उसके होंठ राख़ से सन गए।"[12]

इस प्रकार चंदर का व्यक्तित्व मनोवैज्ञानिक धरातल पर तैयार किया गया प्रतीत होता है। उपन्यास में सुधा, चंदर के अतिरिक्त विनती, डॉ. शुक्ला, विसरिया, बुआ जी, पॉमिल डिक्रूज (पम्मी), गेसू, मियां अख्तर आदि पात्र भी हैं। उपन्यास का 'बर्टी' एक ऐसा पात्र है अगर उसे चंदर की मानसिक विक्षिप्तता का प्रतीक कहें तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

उपन्यास तात्विक दृष्टि से सफल उपन्यास है। उपन्यास का कथानक रोचक, सरल एवं भावुकता से ओत-प्रोत है। पात्रों का चयन सूझ-बूझ के साथ किया गया है। भाषा एवं शिल्प के दृष्टिकोण से भाषा-शिल्प सरल, स्पष्ट, प्रांजल तथा बोधगम्य है। शब्द चयन की दृष्टि से उपन्यास में संस्कृतनिष्ठ, हिन्दी, अँग्रेजी एवं देशज शब्दों का प्रयोग किया गया है। देशकाल एवं वातावरण के अंतर्गत उपन्यास इलाहाबाद जैसी पवित्र, पावन और धार्मिक नगरी से शुरू होता है। संवाद योजना की दृष्टि से भी उपन्यास सफल है और अंत में उपन्यास अपने प्रयोजन में भी सफल हुआ है। सामाजिक आदर्श का निर्वहन ही उपन्यास का मूल प्रयोजन है।

संदर्भ :-

कमलेश्वर (संपादक), मेरे हमदम मेरे दोस्त, (नेशनल पब्लिशिंग हाउस : दिल्ली, 1975), पृ-52।

विष्णुकांत शास्त्री, अन्नतपथ के यात्री : धर्मवीर भारती (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, सं -1999), पृ-77।

विष्णुकांत शास्त्री, अन्नतपथ के यात्री : धर्मवीर भारती (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, सं -1999), पृ-08।

धर्मवीर भारती, गुनाहों का देवता (भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन-वाराणसी, 1959), पृ.- आवरण से ।

..... वही.....पृ.-150-51।

.....वही .....पृ. 375 ।

.....वही .....पृ. 205।

.....वही .....पृ. 65 ।

.....वही .....पृ. 145।

.....वही .....पृ.- 310।

.....वही .....पृ. 198 ।

.....वही.....पृ. 379।

कनिष्ठ राजभाषा अधिकारी,
राजभाषा अनुभाग, मानव संसाधन विभाग,
एसजेवीएन-झाकड़ी, तह.-रामपुर बुशहर,
जिला शिमला, पिन-172201।
दूरभाष-9999149201, 8988376802।

सबके वश की बात नहीं है

गिरेन्द्रसिंह भदौरिया 'प्राण'

प्यार भरी सौगात नहीं यह,
कुदरत का अतिपात हुआ है ।
ओले बनकर धनहीनों के,
ऊपर उल्कापात हुआ है।।
फटे चीथड़ों में लिपटों पर,
बर्फीली आँधी के चलते,
पत्थर बरस रहे धरती पर,
साधारण बरसात नहीं है।
ऐसे में सड़कों पर सोना,
सबके वश की बात नहीं है।।

पग पथ बना बिछौना जिनका,
आसमान ही रहा रजाई।
बेशक आँख मुँदी हो लेकिन,
नींद कभी भरपूर न आई।।
फुटपाथों पर सोनेवालों के बारे में कुछ तो सोचो,
जिन पर छत क्या दीवारों सी
टूटी फटी कनात नहीं है।
उस पर जीवन राग पिरोना,
सबके वश की बात नहीं है।।

अपने खून पसीने से जो,
गीले करते महल बगीचे।
पड़े हुए हैं उच्च भवन के,
सम्मुख खुले गगन के नीचे।।
भार सरीखा जीवन ढोते,
पूस मास में भीग रहे हैं,
तुमने कहा क्षणिक बारिश है,
कोई बज्राघात नहीं है।
इस पानी में देह भिगोना,
सबके वश की बात नहीं है।।
भरी ठण्ड में यूँ चौरस में,
आना स्वतः सिहर जाना है।
उस पर एक बूँद पड़ जाना,
तन पर विकट कहर ढाना है।।
जैसे ठण्ड सताती तुमको,
वैसे ही इनको भी समझो,
हाड़ माँस के ये पुतले हैं,
लोहा या इस्पात नहीं है।
जड़काले में बदन भिगोना,
सबके वश की बात नहीं है।।

उत्पातों की बस्ती है यह,
घात और प्रतिघात यहाँ हैं
षडयन्त्रों की होड़ मची है,
मारकाट आघात यहाँ हैं।।
करुणा दया दूर की बातें,
हृदयहीन क्रूरता बढ़ी है,
किसको कौन मात दे देगा,
ज्योतिष तक को ज्ञात नहीं है।
ऐसे में हँस हँस कर रोना,
सबके वश की बात नहीं है।।

रोटी रूठी भूख मगन है,
पानी पीना भी मुश्किल है।
मजबूरी में मरना मुश्किल,
जीवन जीना भी मुश्किल है।
साँस बचाने की कोशिश में,
हवा निगलना भी संकट है,
लोहे के कटकटे चने हैं,
जगन्नाथ का भात नहीं है।
इन्हें चबाना और पचाना,
सबके वश की बात नहीं है।।

जिनको पूस जेठ सा लगता,
और चैत्र सावन लगता है।
जिनको माघ क्वार दिखता है,
फागुन सा अगहन लगता है।।
उनसे बात करोगे तो फिर,
उल्टा ही उत्तर पाओगे,
वे खुशियों की बात करेंगे,
कहीं कुठाराघात नहीं है।
दुनिया के दुखड़ों पर रोना,
सबके वश की बात नहीं है।।

आखिर कहाँ विकास रुका है
अटकी हुई कहाँ पर गाड़ी।
किसकी ओर निगाहें चिपकी,
बनते बहुत अबोध अनाड़ी।।
चालाकों की इस दुनिया के
अरे बादशाहो तुम सुन लो,
मानव की मजबूत कड़ी यह,
भूतों की बारात नहीं है।
शोषित होकर पोषित होना,
सबके वश की बात नहीं है।।

'वृत्तायन' 957, स्कीम नं. 51
इन्दौर पिन - 452006 (म.प्र.)
मो. 9424044284
6265196070
Email- prankavi@gmail-com

कवि तुम ऐसी रचो कविता

हे कवि !
कवि! तुम ऐसे गीत सुनाओ
दुनिया जिसको गुनती जाए
कवि! तुम ऐसी रचो कविता
दुनिया जिसको पढ़ती जाए।।
कवि तुम ---!
परिवर्तन की लहर चली है
शब्दों में अंगार भरो तुम
कलम तुम्हारी रफ्ता-रफ्ता
अग्नि के शोले बरसाए।।
कवि तुम ----!
कागज जल कर राख नहीं
चाह यही कुंदन बन जाए
इस कुंदन की मधुर तपन से
लोक आलोकित हो जाए।।
कवि तुम ----!
आज कोई नवक्रांति जागेगी
जो परितः रोशनी लागेगी
अवसाद के गहन तिमिर से
लोक लोक चेतन हो जाए।।
कवि तुम -----!
पुरुषों का पौरुष्य सो गया
छाई चारों ओर हताशा
श्मशानों के उठे धुएं से
जाग उठें पौरुष के साए।।
कवि! तुम ऐसे गीत सुनाओ
आग धमनियों में भर जाए।।

रतनसिंह किरमोलिया
हल्द्वानी

सुधेन्दु ओझा के दो गीत

इस सावन बरसात में

तुम्हें निमंत्रण भेज रहा हूँ, नव कोंपल नव पात में
मुझसे मिलने आ जाना तुम, इस सावन बरसात में

तुम होगे और यादें होंगी
ढेरों सारी बातें होंगी
ज़ख्म हरा करने वाली
काली-काली रातें होंगी
सौ-सौ आँसू निकल पड़ेंगे
सब बातों की बात में

तुम्हें निमंत्रण भेज रहा हूँ, नव कोंपल नव पात में
मुझसे मिलने आ जाना तुम, इस सावन बरसात में

लहराता बादल होगा
होगा, तेरा आँचल होगा
आँखों पर लक्ष्मण रेखा सा
चौकस, प्रहरी काजल होगा
सौ-सौ जीत निरर्थक समझें
तुम से पाई मात में

तुम्हें निमंत्रण भेज रहा हूँ, नव कोंपल नव पात में
मुझसे मिलने आ जाना तुम, इस सावन बरसात में

बूँदों की रिम-झिम, रिम-झिम
तारों की टिम-टिम, टिम-टिम-टिम
पदचापों से तेरी उठतीं
पायल ध्वनि मादक, मद्धिम
जीवन गीत कहाँ पूरा है
बिना तुम्हारे साथ में

तुम्हें निमंत्रण भेज रहा हूँ ,नव कोंपल नव पात में
मुझसे मिलने आ जाना तुम, इस सावन बरसात में

दुश्मनी ही सही इक सलीक़ा तो हो

बात कहने का को तरीक़ा तो हो
दुश्मनी ही सही इक सलीक़ा तो हो

जो अकेला चला और अकेला रहा
तय करे तो सही वह किसी का तो हो

फ़ैसले रोज़ हम-तुम तो करते नहीं
फ़ैसला जो करें वह कहीं का तो हो

हल को ढूँढ़ेगे हम इसमें संदेह क्या
प्रश्न लेकिन तुम्हारा सही-सा तो हो

जिसको आकाश छूने की जल्दी पड़ी
कह दो उसको कि पहले ज़मीं का तो हो

गम ही ग़म है लिखा आँसुओं पर मेरे
एक कतरा मगर कुछ खुशी का तो हो

धुंध का यह समां हट भी जाए मगर
धूप का एक टुकड़ा सभी का तो हो

जो लड़ाता रहा मज़हबों में हमें
नाम उसका ना कोई मसीहा तो हो

प्रेम की राह पर चल तो देंगे सभी
सामने कोई गांधी सरीखा तो हो

97, सुन्दर ब्लॉक, शकरपुर एक्सटेंशन,
नई दिल्ली-110092
9868108713

तेरा गीत

डॉ. प्राची सिंह

सृष्टि के
हर मौसम से
जीवन के
अनगिन रंग चुरा
लिखे हैं मैंने
अनगिन गीत...
अपने ही गीतों की
भाव आवृत पग थापों पर
थिरकते रहे
आनंद निमग्न
मन के बेसुध कदम...
और
फिर
बिसर गयी
अपनी ही हर धुन,
जब गूँज उठा
मौन के अवकाश में
तेरा संगीत,
देह के हर पोर को स्पंदित कर
गुनगुनाते हैं जिसे
जागृति स्वप्न निद्रा
और थिरक उठता है पूरा अस्तित्व
मुझमें उतर कर...
और निर्भाव मैं
निर्विकल्प
बन जाती हूँ
तेरा गीत

413, दुर्गा कालोनी, ए–1, ट्रेडिंग कार्पोरेशन गोजाजाली, बरेली रोड, हल्द्वानी–263139 (नैनीताल)

बांस

रणजोध सिंह

बांस--------
यूं ही नहीं
हो जाता अंकुरित,
पाँच वर्ष का समय
लेती हैं इसकी जड़े
विकसित होने में।
मगर----------
जब एक बार
हो जाता है ये अंकुरित,
मात्र छः महीने में
बन सकता है पूरा पेड़
आसमान को छूने की
क्षमता लिये हुए।
कदाचित--------
ईश्वर जानता है
बांस को ऊँचे,
बहुत ऊँचे उठना है,
इसलिये---------
इसकी जड़ों को
मजबूत होना ही चाहिये।

दो ग़ज़लें --विज्ञान व्रत

हो चुका ह सब
तू रचेगा अब

कुछ नहीं था तब
क्या नहीं तू अब

ह कहाँ त अब
जानता है रब

त मिलेगा तो
राम जाने कब

भूलना मुश्किल
वो अनोखी छब

मुझसे मिलकर फ़रज़ाने
लौटे होकर दीवाने

शायद मुझको समझे हों
आय थ जो समझाने

एक ज़रा-सी ग़लती पर
दुनिया-भर क जुर्माने

चेहरा तुलसी-चन्दन-सा
आँखों में हैं मैख़ाने

रख अपने पैमानों को
मेर अपने पैमाने

एन - 138, सैक्टर - 25,
नोएडा - 201301
मो. 9810224571

प्रमोद चौहान की ग़ज़ल

मुस्कुराने की बात करते हो
दिल दुखाने की बात करते हो

कीमती जिंदगी बड़ी होती
खूँ बहाने की बात करते हो

जिंदगी गम से है भरी मेरी
क्यों हँसाने की बात करते हो

याद जिससे जुड़ी मिरी उसके
ख़त जलाने की बात करते हो

झोपड़ी ही मुझे महल लगती
घर बनाने की बात करते हो

दर्द से है पुराना नाता क्या
बस रुलाने की बात करते हो

जिसको मैं तो जला चुका कब का
ख़त पुराने की बात करते हो

दर्द मिलता है बस जमाने से
क्यों जमाने की बात करते हो

झूठ सुनने की जिसकी आदत हो
सच बताने की बात करते हो

है अंधेरा अभी बहुत बाकी
लौ बुझाने की बात करते हो

ख़्वाब में भी नहीं है जो मेरे
उसके पाने की बात करते हो

9893559911

मदर डे

उदयवीर भारद्वाज

मत कर मदर डे पर माँ.... माँ!
देखे बहुत ऐसे चिल्लाने वाले
रख दिल पे हाथ
पूछ आत्मा से अपनी
जन्म दिया जिसने
क्या कदर की उसकी
ममता के आँचल में पला
उंगली पकड़ तू माँ की चला

गीले में सो गई
भूखी रह
पेट तेरा भरा
गरीबी में पैबंद रहे लिबास में
तेरी ख्वाहिशें पूरी करती रही
बता!
कौन सी इच्छा पूरी कि तूने उसकी?
खून पिला-पाला पोसा चार बेटों को
पानी में भिगो-भिगो
खाए रूखे-सूखे टुकड़े
अंत समय दो बूंद पानी
को तरसती रही

आलीशान घर की मालकिन को
वृद्ध-आश्रम में
दम तोड़ते देखा है
कूड़े से बीन खाती गंदगी
औलाद की खातिर
बेचना पड़े शरीर
कहाँ परहेज करती है

और अंत में!
बेटे की प्रतीक्षा में
माँ को कंकाल बनते देखा है

जमीन जायदाद के मामले में
हिंसा का शिकार होती माँ है
पिता-पुत्र के झगड़े में
चक्की के दो पाटों में
पिसती देखी माँ है

माना कि दुनिया खाली नहीं
मातृभक्त औलादों से

परन्तु मेरा सवाल तो है
उन शैतान औलादों से
जो करते सत्संग और भंडारे
निभाते हैं आडम्बर सारे
भाई-बहन से रिश्ते तोड़
तार-तार कर दिए
माँ के अरमान सारे
मत कर मदर डे पर माँ माँ माँ
देखे बहुत ऐसे चिल्लाने वाले
देखे ऐसे बहुत चिल्लाने वाले

भारद्वाज भवन
मंदिर रोड कांगड़ा
हिमाचल प्रदेश 176001
मोबाइल नंबर 94181 87726

कुमारनल्लूर देवी मंदिर की सांस्कृतिक विरासत

डॉ. श्रीकला यु,

देवि-मन्दिर, प्रार्थना, वास्तुकला, चेरामान पेरुमाल, उदयानापुरम, तमिलनाडु, मदुरै-मीनाक्षी, पुजारी, दिव्य ज्योति, श्रीकोविल, अशरीरी, भित्ति चित्र, त्रिकार्तिका, नौका-दौड़, आशीर्वाद, शांकराचार्य, कुरुरमा।

शोध सार :कुमारनल्लूर एक प्राचीन सांस्कृतिक केंद्र है। यह शहर कुमारनल्लूर देवी मंदिर और मंदिर के वार्षिक त्रिकार्तिका उत्सव के लिए प्रसिद्ध है। मंदिर 2400 वर्ष से भी अधिक पुराना बताया जाता है। मंदिर की वास्तुकला नालम्बलम और श्रीकोविल की अनूठी संरचना के लिए उल्लेखनीय है, दोनों को श्रीचक्र शैली में बनाया गया है। एक मूठ अथवा कुंदा के साथ अंगूठी जैसी वस्तु, जिसे देवी के दाहिने हाथ में रखा गया है। इस प्रकार की स्थापत्य कला मन्दिर-वास्तुकला में विरले ही देखने को मिलती है। मंदिर में मूर्ति की प्रतिष्ठा से जुड़ी हुई प्राय: सारी घटनाओं के भित्ति चित्र भी अत्यंत मनमोहक ढंग से चित्रित हैं। यह मूर्ति अन्जन-शिला से निर्मित है। यहाँ का लोक जीवन भी देवी चैतन्य से सराबोर है। पारंपरिक कला एवं संगीत भी देवी के आशीर्वाद से अपनी चरम सीमा पर हैं।

बीज शब्द : कुमारनल्लूर, भारतीय संस्कृति,

भारतीय संस्कृति और परंपरा के अक्षय खजाने हैं यहाँ के असंख्य पुण्य मंदिर। इन मंदिरों में लोक जीवन, संस्कृति और पारंपरिक मूल्य परस्पर पिरोये गए हैं। मलयालम में मंदिर के लिए प्रयुक्त शब्द है-क्षेत्र, अर्थात जो क्षत यानि चोट (दुख) को नष्ट करता है वह पुण्य स्थान 'क्षेत्र' है।

कुमारनल्लूर केरल के कोट्टायम शहर का एक उपनगर है। मीनाचिल नदी के तट पर स्थित यह गाँव कोट्टायम शहर से सिर्फ 5 किमी दक्षिण में है। कुमारनल्लूर एक प्राचीन सांस्कृतिक केंद्र है। यह शहर कुमारनल्लूर देवी मंदिर और मंदिर के वार्षिक त्रिकार्तिका उत्सव के लिए प्रसिद्ध है। मंदिर के अस्तित्व में आने से पहले इस स्थान को 'थिंगलक्काडु' के नाम से जाना जाता था। बाद में 'थिंगलक्काडु' नाम बदल गया और इसे 'इंदु काननम' के नाम से जाना जाने लगा। कुछ प्राचीन लिपियों में, मंदिर का वर्णन किया गया है और इसे महिषारी कोविल (मन्दिर) के रूप में जाना जाता है। यहाँ दक्षिण भारत की कला एवं संस्कृति की गरिमा विशिष्ट रूप से पाई जाती है।

कुमारनल्लूर देवी मंदिर सबसे महत्वपूर्ण देवी

मंदिरों में से एक है। ऐतिहासिक और पौराणिक साक्ष्यों के साथ-साथ सूचना के अन्य स्रोतों के अनुसार यह मंदिर 2400 वर्ष से भी अधिक पुराना बताया जाता है। मंदिर की वास्तुकला नालम्बलम और श्रीकोविल की अनूठी संरचना के लिए उल्लेखनीय है, दोनों को श्रीचक्र शैली में बनाया

गया है।

कर्नाटक कृति 'श्री कुमार नागरलय' अताना राग और आदि थालम में स्थापित महाराजा स्वाति थिरुनल के एक लोकप्रिय 'क्षेत्रकृति' (एक विशेष मंदिर के देवता के बारे में रचना) है और सेम्मनगुडी श्रीनिवास अय्यर, एमएस सुब्बुलक्ष्मी आदि सहित कई किंवदंतियों ने इसे लोकप्रिय बनाया है।

जब देवी दुर्गा की मूर्ति स्थापित करने के लिए 'वैक्कम' के पास उदयनापुरम में एक मंदिर का निर्माण शुरू हुआ, तब चेरमान पेरुमाल केरल के शासक सम्राट थे। उन्होंने महादेव के सुपुत्र भगवान सुब्रमण्यम (कुमारन अथवा कार्तिकेय) की मूर्ति स्थापित करने के लिए एक स्थान, जिसे बाद में कुमारनल्लूर के नाम से जाना गया, में एक मंदिर का निर्माण शुरू किया। इसी बीच, तमिलनाडु मदुरै-मीनाक्षी मंदिर में एक घटना हुई। देवी की रत्न जड़ित नाक की नथ चोरी हो गई या गायब हो गई थी। राजा ने जांच का आदेश दिया। साथ ही उसने मंदिर के पुजारी को 41 दिन बाद मार देने का आदेश दिया। राजा का मानना था कि वह 41 दिनों के भीतर इस समस्या का समाधान कर लेगा। उसे संदेह ही नहीं पूरा विश्वास था कि पुजारी की जानकारी के बिना कुछ नहीं हुआ होगा। हालांकि पुजारी निर्दोष था। दुखी हाकर पुजारी ने देवी के चरणों में शरण ली।

जैसे-जैसे दिन और सप्ताह बीतते गए, शोकग्रस्त पुजारी ने दिन-रात रोते और प्रार्थना करते हुए बिताए। 40 वें दिन की रात, वह मंदिर के दरवाजे पर ही सो गया। वह अपने भाग्य पर विचार कर रहा था कि अगले दिन उसका जीवन समाप्त हो जाएगा। तभी उस रात उसने एक सपना देखा था। देवी उनके सामने प्रकट हुईं और उसे तुरन्त वह जगह छोड़ने का आदेश दिया। हैरान और हतप्रभ पुजारी ने आँखें मूँद लीं। इसी समय उसने एक दिव्य प्रकाश को आगे बढ़ते देखा था। उसने यह जाने बिना कि वह कहाँ जा रहा है, उस प्रकाश का पीछा किया। वह प्रकाश उसे एक लंबी दूरी तक ले गया और अंत में

उस स्थान पर पहुँच गए जो कालांतर में कुमारनलूर के नाम से जाने लगा। कुमारनल्लूर में, भगवान सुब्रमण्यम या कुमारन की मूर्ति स्थापित करने के लिए मंदिर का निर्माण किया जा रहा था।

वह दिव्य प्रकाश मंदिर के श्रीकोविल (गर्भगृह) में प्रवेश कर गया। इसके अलावा, यह प्रतिष्ठा (पूजा) का समय भी हो गया था जब उस दिव्य दीप्ति ने श्रीकोविल में प्रवेश किया। फिर एक पुजारी ने एक अशरीरी शब्द सुना- 'कुमारन अल्ला ऊरिल' -जिसका अर्थ है, 'यह जगह कुमार के लिए नहीं है'। यह कुमारी (देवी) का स्थान है। अतः इसका नाम कुमारनल्लूर पड़ा। पेरुमाल निराश था। राजा ने कुमार की मूर्ति को मंदिर में स्थापित करने के लिए उदयनापुरम की यात्रा की, जो निर्माणाधीन था। रास्ते में, अकस्मात सब तरफ कुहरा भर गया। पेरुमाल और उनके सेवकों को कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा। ये सब देवी की माया से हुआ था। अब उन्होंने देवी से प्रार्थना की कि वह इलाका राजा द्वारा देवी के लिए समर्पित किया जाएगा, देवी राजा को बिना किसी रुकावट के उदयानापुरम पहुँचने दे। तुरंत सब कोहरा कहीं गायब हो गया और मार्ग स्पष्ट दिखाई पड़ने लगा। अनेक बाधाओं का सामना करने के बाद, पेरुमाल ने वह क्षेत्र देवी के लिए समर्पित कर दिया जो बाद में मान्जूर नाम से प्रसिद्ध हुआ। कोहरे के लिए मलयालम में 'मंन्ज' शब्द का प्रयोग होता है। अंत में पेरुमाल उदयनापुरम पहुँचने में कामयाब रहे और वहाँ मंदिर के श्रीकोविल में सुब्रमण्यम (कार्तिकेय) की मूर्ति स्थापित कर दी।

बाद में, पेरुमल कुमारनल्लूर लौट आए और वहाँ देवी की मूर्ति स्थापित करने की तैयारी शुरू कर दी। फिर उन्हें एक और विचार आया कि मूर्ति उदयानापुरम से ले आने में थोड़ा विलंब हो सकता है तो उसी दिन रात सपने में आकर देवी ने स्वयं उन्हें मार्ग दर्शन दिया और कहा कि पास के एक स्थान में वेदगिरी में कुएँ के पानी में एक मूर्ति पड़ी है। इसी मूर्ति को, जो अन्जन-शिला से निर्मित है, राजा पेरुमाल वेदगिरी से ले आए। यह मूर्ति महर्षि परशुराम ने बनाई थी और इससे पूर्व इसी मूर्ति की पूजा की थी। कहा जाता है कि मूर्ति-स्थापना के समय, उलझे हुए बालों वाला एक ब्राह्मण ऋषि आकर श्रीकोविल में प्रवेश कर गया और उसने उस भारी मूर्ति को एक क्षण में स्थापित कर दिया। जैसे ही मूर्ति की स्थापना हुई वह ब्राह्मण गायब हो गया। आज तक लोग मानते हैं कि वह ब्राह्मण ऋषि और कोई नहीं स्वयं महर्षि परशुराम थे। मदुरै से तेज का अनुसरण करने वाला ब्राह्मण-पुजारी इस मंदिर का पुजारी बन गया। उसके निवास गृह को मदुरै-इल्लम के नाम से जाना जाता है। पुजारी के उत्तराधिकारी आज भी देवी की पूजा करते हैं।

मंदिर 15,000 वर्ग मीटर के क्षेत्र में स्थित है। मंदिर का मुख्य गोपुरम (प्रवेश द्वार) पूर्व दिशा की ओर है और मंदिर के चारों ओर ऊँची दीवारें प्रत्येक दिशा (दक्षिण, पश्चिम और उत्तर) में अन्य तीन गोपुरम (प्रवेश) के साथ हैं। मंदिर में प्रवेश करते समय मंदिर का दृश्य एक दिव्य चित्र प्रस्तुत करता है। मुख्य गोपुरम के माध्यम से मंदिर में प्रवेश करने पर स्तंभों पर गणपति, शिव और अन्य संतों सहित कई मूर्तियों की नक्काशी के साथ स्वर्ण ध्वज और बलिकल पूरा दिखाई देता है। नालम्बलम के अंदर श्रीकोविल और मुख्य मंडपम नक्काशीदार पत्थरों से बने रास्तों से घिरे हुए हैं। मुख्य श्रीकोविल के दाहिनी ओर शिव का मंदिर है। भद्रकाली मंदिर, मंदिर के दक्षिण में स्थित है, साथ ही पूरे मंदिर के लिए नक्काशीदार पत्थरों पर चारों ओर से फैला हुआ मार्ग है।

कुमारनल्लूर मंदिर में प्रदर्शित भित्ति चित्र अनमोल और दुर्लभ हैं। गर्भगृह (श्रीकोविल) की

बाहरी दीवारों को हिंदू देवी-देवताओं के भित्ति चित्र और महाकाव्य रामायण और महाभारत की महत्व पूर्ण घटनाओं से सजाया गया है। इन भित्ति चित्रों को रंगने के लिए प्राकृतिक रंगों और औषधीय पौधों का उपयोग किया जाता था। मंदिर में मूर्ति की प्रतिष्ठा से जुड़ी हुई प्राय: सारी घटनाओं के भित्ति चित्र भी अत्यंत मनमोहक ढंग से चित्रित हैं।

कुमारानल्लुर मंदिर का महत्वपूर्ण त्योहार त्रिकार्तिका है, जो वृश्चीकम (नवंबर-दिसंबर) के महीने में मनाया जाता है। कार्तिका के दिन 'उदयनापुरम' और त्रिशूर 'वडक्कुन्नाथ' मन्दिरों में भी उत्सव मनाते हैं। इस दिन वडक्कुन्नाथ मन्दिर में दक्षिणी छोर पर मन्दिर की दीवार पर निवेद्यम (भेंट) करने की प्रथा है। कहानी इस प्रकार है कि वडक्कुन्नाथ मन्दिर में देवता, कार्तिका के दिन स्नान के बाद लौट रही देवी की सुंदरता से बहुत प्रभावित हुए। वे मंदिरों से बाहर आए और दीवारों पर चढ़ गए। वे वहाँ खड़े होकर गुजर रही देवी की मोहक आकृति को देख रहे थे और मन्दिर के पुजारी जो देवताओं की तलाश में बहुत दूर भागे थे, आखिरकार उन्हें दक्षिणी छोर पर मन्दिर की दीवार पर मिले। इसके बाद, कार्तिका के दौरान, मन्दिर की दीवार पर पूजा की जाती है। शाम को रोशनी का प्रदर्शन होता है, जिसे 'कार्तिका विलाक्कू' कहा जाता है, यह रोशनी इस उत्सव का मुख्य आकर्षण है।

कुमारनल्लूर मंदिर में नंगियारकूत्तु (एक विशेष नृत्य), कूत्तु नृत्य का ही एक प्रकार होता है जिसका प्रदर्शन नांगियारों या चाक्यार समुदाय के स्त्री सदस्यों द्वारा किया जाता है। यह एकल नृत्य नाटिका है जो मुख्य रूप से श्री कृष्ण के आख्यानों पर आधारित होती है। इसमें श्लोकों का वाचन होता है और स्वांगों तथा नृत्य के जरिए उनकी व्याख्या होती थी। इसकी कूटियाट्टम के समान ही मुद्राएँ होती हैं लेकिन अधिक विशद। यह कला रूप अब भी तृश्शूर के वडक्कुन्नाथन मन्दिर, अम्बलप्पुषाके श्री कृष्ण मन्दिर, इरिंजालक्कुडाके कूडलमाणिक्यम और कोट्टयम के कुमारनल्लूर मंदिर में प्रदर्शित होती है। कुमारनल्लूर सबसे महत्वपूर्ण 108 दुर्गा मन्दिरों में से एक के रूप में माना जाता है।

श्री कुमारालयम देवी स्तुति, मलयालम के प्राचीन कवित्रयों में एक 'कुंजन नाम्बियार' द्वारा रचित है। 'श्री कुमारलयम तन्नील विलांगुन्न श्री देवी पार्वति पलायमां'..... जो सभी देशिकों (साधकों) के लिए प्रेरणादायक है। कुंजन नाम्बियार तत्कालीन अंबालापुषा नामक स्थान के 'चेम्बकशेरी' राजा के राज दरबार का सदस्य था। कहा जाता है कि इन्होंने 500 से अधिक साल, अंबालपपुषा राजा यहाँ देवी की सेवा की। परिवार की श्रीवृद्धि के लिए यहाँ पर नित्य प्रोज़्वलित होने वाला दीपक 'भद्रदीप' नाम से जाना जाता है जो अंबलाप्पुषा राजा की देन है। कुंजन नाम्बियार 'तुल्लल' नामक नृत्य कला के उपज्ञाता हैं जो केरल की अपनी सान्स्कृतिक विरासत की एक महत्व पूर्ण कड़ी है। नम्बियार ने 12 दिन कुमारनल्लूर में रहकर भजन करते हुए अपनी देवी स्तुति की रचना की थी।

कुमारनल्लूर मन्दिर में हर एकादशी के दिन उपवास के साथ नारायनीयम कृति का पारायण समुचित रूप में करते आ रहे हैं। वैशाख के महीने 'सप्ताह यज्ञ' और नवरात्रि के समय 'नवाह यज्ञ' का भी आयोजन करते हैं। मंदिर में भगवत-गीता कक्षा और चेंड़ा वाद्य-कला के अभ्यास आदि कराए जाते हैं ।

केरल का देशियोत्सव तिरुवोणम चिंगम (श्रावण) महीने में मनाए जाते हैं। इससे जुड़ा एक सांस्कृतिक पर्व है उतृट्टाति ऊरुचुट्टु (देश-भ्रमण) नौका-दौड़। कुमारनल्लूर देवी का चैतन्य एक सिंह-यान में बदलकर मंगलाचरण से युक्त नौका में पूरे वाद्य-वृंद सहित, धूम धाम के साथ सुबह 8

बजे मीनचिल नदी से नीली मंगलम, सूर्य कालड़ी, नट्टाशेरी, कुडमालूर, आरपपूक्करा आदि स्थानों से होकर रवाना होती है। लोगों का विश्वास है कि देवी अपने सेवकों के साथ पूरे देश वासियों को आशीर्वाद देने के लिए नौका में पधार रही है। बीच बीच में रुककर भक्तों का नैवेद्य-समर्पण भी स्वीकार करते हुए शाम तक नौका कुमारनल्लूर मन्दिर में पहुँचती है। यह परंपरा बहुत सुंदर एवं प्रभावकारी है, जो आज भी निर्बाध चली आ रही है।

कुमारनल्लूर मन्दिर में प्रविष्ट होकर सबसे पहले सुवर्ण ध्वज के समीप स्वामी गणपत की वंदना करने के बाद सीधे दक्षिण में शिव मंदिर की ओर जाना होता है। वहाँ परमशिव की वंदना के बाद दक्षिण पश्चिम दिशा में एक स्तम्भ में उपविष्ट श्री भूतनाथ की वंदना करने के उपरांत ही जगदंबा कारत्यायनी देवी की वंदना करनी होती है। उसके बाद भद्रदीप का दर्शन कर बाहर निकलते हैं, फिर भद्रकाली का दर्शन कर प्रदक्षिणा पूरी करते हैं। हर दिन मन्दिर में 5 पूजा, विधि के अनुसार सम्पन्न होती आ रही है। यहाँ सुबह सरस्वती, उसके बाद पार्वती, फिर दुर्गा और शाम को वन-दुर्गा के रूप में देवी के पाँचों स्वरूप दर्शनीय हैं।

मन्दिर प्रवेश उद्घोषणा सन 1936 में त्रावणकोर के महाराजा श्री चित्तिरा तिरुनाल बालराम वर्मा द्वारा की गयी एक उद्घोषणा है जिसके द्वारा तथाकथित 'नीची जाति' के लोगों को त्रावणकोर राज्य के हिन्दू मन्दिरों में प्रवेश के निषेध को समाप्त कर दिया गया। तिरुवितानकूर के महाराजा ने समस्त अवर्ण, दलित एवं आदिवासियों के लिए मंदिर में प्रवेश करने की अनुमति देने के पश्चात महात्मा गाँधी जी ने कुमारानल्लुर मंदिर में दर्शन किया था और सभी हरिजनों को मंदिर के अंदर पाकर गाँधीजी अत्यधिक प्रसन्न हुए थे। अपनी खुशी को सभी के समक्ष प्रकट करते हुए उन्होंने बताया था कि बिना इस मंदिर के दर्शन से मेरा जीवन ही असफल रह गए होते। यह स्थान गाँधी स्मारक के रूप में आज भी सुरक्षित है। महाराज स्वातितिरुनाल, मारताण्ड वर्मा, दिवान सी पी राम स्वामी अय्यर आदि अनेक विशिष्ट व्यक्तियों के दर्शन से कुमारनल्लूर की प्रसिद्धि बढ़ गई।

इतिहास के अनुसार 1200 वर्ष पूर्व जगदगुरु श्री शंकराचार्य ने यहाँ आकर दर्शन किए और पाँच

संदर्भ
विकी पीड़िया
सावित्री नीलकन्ठन, अम्मे महामाये

Sreekalau7@gmail-com

सहायक प्राध्यापिका, एन एस एस हिन्दू कॉलेज, चंगनाचेरी, कोट्टायम, केरल-sreekalau7@gmail.com&
मो.:9446206001

रवीन्द्र का रचना संसार: औदात्य के उत्स

-हरिदास व्यास

1913 में नोबेल पुरस्कार घोषित होने पर रवीन्द्रनाथ टैगोर की पहली प्रतिक्रिया थी - They have taken my quietism (उन्होंने तो मेरी शान्ति छीन ली।) विभिन्न क्षेत्रों में मिले अब तक नोबेल पुरस्कार विजेताओं की प्रतिक्रियाओं में यह सबसे अनूठी और विचित्र है। इस प्रतिक्रिया को बेहतर न मानने वाले लोग भी रवीन्द्र नाथ टैगोर के विविधमुखी और औदात्यपूर्ण रचना संसार से असहमत नहीं हो पाते।

'भुवन मोहिनी' और 'भग्न हृदय' जैसी प्रारम्भिक काव्य पुस्तकों और पहले उपन्यास 'बऊ ठकुरानीर हार' से प्रारम्भ कला संसार की पगडंडियाँ कालान्तर में भव्य मार्ग में बदल गईं। पर उनके बनने और रचने की प्रक्रिया के उत्स अत्यन्त गहरे और रचना प्रक्रिया के अंधेरे तहखानों में खोजे जा सकते हैं।

लौंजाइनस ने जब साहित्य-दर्शन में पहली बार 'औदात्य' (Sublimity) शब्द का प्रयोग किया तो कला-आलोचना संसार की अनेक खिड़कियाँ खुल गईं। बाद की सदियों की अनेक अमूर्त कलाओं की गहराई और उत्कर्षों को समझने के लिए यह सिद्धान्त बेहद सहायक हुआ।

यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि पहली से तीसरी शताब्दी के बीच किसी समय अपने किसी मित्र या शिष्य के अनुरोध पर 'भाषण-कला' को विवेचित करने वाली 44 अध्यायों व केवल 60 पृष्ठों वाली यह यूनानी पुस्तक 'पेरि-हुप्सुस' 1500 वर्षों तक विलुप्त रहने के बाद इतालवी विद्वान 'रोबेरतेल्लो' के कारण प्रकाश में आई। अंग्रेजी लेखक जॉन हॉल ने पहली बार इसका अंग्रेजी अनुवाद 'ऑफ द हाईट ऑफ एलक्वेंस' (वाग्मिता का प्रकर्ष) शीर्षक से किया। तेरेन्तियानुस को पत्र रूप में लिखी इस पुस्तक के अनुसार 'उदात्त अभिव्यंजना का अनिर्वचनीय प्रकर्ष और वैशिष्ट्य' है। उदात्त का प्रभाव श्रोताओं (आस्वाद) को मान लेने (Persuation) में नहीं बल्कि सर्वदा और सर्वथा विस्मित और सम्मोहित (Entrancement) होने में है। मानना न मानना हमारे अधिकार में है परन्तु कला की सम्मोहन-शक्ति से तो आस्वादक प्रतिरोधक हीन (Irresistible) हो जाता है। यह भी कहा गया है कि उदात्त रचना में सर्जनात्मक कौशल और वस्तु-विन्यास कला में धीरे-धीरे उभरते हुए अकस्मात् एक कौंध की तरह उद्घाटित होता है, जो पूरी रचना को आलोकित कर देता है। लौंजाइरस उदात्त को प्रकृति-प्रदत्त मानते हुए भी ज्ञान आदि से पूर्ण करने की अनिवार्यता स्वीकार कर उदात्त-विरोधी तत्त्वों की ओर भी संकेत करते हैं। वे शब्दाडम्बर, भावाडम्बर एवं तुच्छता (बचकानापन) को हेय और त्याज्य मानते हैं। लौंजाइनस इस क्रम में उदात्त के पाँच स्रोत मानते हैं-

1. महान विचारों की उद्भावना, 2. प्रबल और अंत:प्रेरित भाव, 3. अलंकार (केवल शब्दालंकार ही नहीं विचारालंकार भी), 4. भव्य शब्द योजना, 5. रचना की गरिमा और उत्कर्ष

(2) विचारों की व्याख्या करते हुए वे अन्य उदात्त रचनाओं के भाव-ग्रहण (Plagiaration) को भी एक अपरिहार्य उप-स्रोत मानते हैं जो पहले दो तत्त्वों के लिए परम सहायक होता है और भारतीय

काव्य शास्त्र में जिसे 'व्युत्पत्ति' कहा गया है। बहरहाल, जिस औदात्य को लौंजाइनस महान आत्मा की प्रतिध्वनि कहते हैं, रवीन्द्रनाथ टैगोर के रचना-संसार का आधार वही प्रतिध्वनि है। यह प्रतिध्वनि उस महान आत्मा की अभिव्यंजना ही प्रतीत होती है और इस अभिव्यंजना के आधार को वे सर्वप्रथम पवित्रतम मानते हैं -

सर्वचिंता हते आमि सर्व चेष्टा करि,
सर्वमिथ्या राखि दिब पूरे परिहरि।
सकल कुटिल द्वेष, सर्व अमंगल,
प्रेमेरे राखिब करि प्रस्फुट निर्मल।। (गीत - 4)

मैं अपनी सम्पूर्ण चेष्टाओं से अपनी, सम्पूर्ण चिंताओं को दूर कर दूँगा, पूर्ण असत्यों को हटा दूँगा। सम्पूर्ण असत्यों को हटा दूँगा। ..... सकल कुटिल द्वेषों व पूर्ण अमंगलों को अपने प्रेम के द्वारा पूर्णतः विकसित एवं द्वेष रहित बना दूँगा।

यह तथ्य लगभग निर्विवाद है कि रवीन्द्र के रचना संसार में प्रकृति, प्रेम, ममत्व विषयक औदात्य सर्वोपरि है और इस उदात्त हेतु स्वयं को समर्पित करने की उत्कट लालसा स्वयं औदात्यपूर्ण है -

छिन्न करो, लओ है मोरे, आर विलंब नय।
कखन जे दिन फूरिये जावे, आसबे आधार करे
कखन तोमार पूजार बेला काटबे अगोचरे
जे ठुकु रङ धरे छे, गंधे सुधाय बुक भरे जे
तोमार सेवाय लओ से ठुकु थाकते सुसमय।
छिन्न करो, छिन्न करो .....

इस क्षुद्र-पुष्प को तोड़ कर ग्रहण कर लो और देर मत करो, कहीं ऐसा न हो कि दिन बीत जाए, अंधेरा आ घिरे ..... मेरे अन्जाने ही तुम्हारी पूजा का समय बीत जाए। इस फीके रंग व भीनी गंध की ओर मत देखो, उन्हें समय रहते अपनी सेवा करने दो। इस क्षुद्र पुष्प को तोड़ कर ग्रहण करो, और देर मत करो।

आखिर रवीन्द्रनाथ टैगोर में कहाँ से उपजा ऐसा उदात्त! कैसे बनी ऐसे उदात्त की पृष्ठभूमि! सच कहें तो इस पृष्ठभूमि के खनिज तत्त्व प्रथम दृष्टया इतने सरस या विस्मित कर देने वाले नहीं होते हैं बल्कि पहली बार में ये सत्य अत्यंत साधारण प्रतीत हो सकते हैं। परन्तु निस्सन्देह वे ही औदात्य तत्त्व के उर्वरक होते है, बीज होते हैं और साहित्य-दर्शन के विधेयवादी सिद्धान्त कार्य-कारण सम्बन्ध के प्रत्युत्तर होते हैं।

(3) औदात्य तत्त्व के परिमार्जन की प्रक्रिया और परिस्थितियों के सम्बन्ध में लौंजाइनस ने अधिक कुछ नहीं कहा है। वस्तुतः इस परिमार्जन की प्रक्रिया, कारण और परिस्थितियाँ प्रत्येक रचनाकार में भिन्न रूप में होती है। रवीन्द्र-साहित्य एवं जीवन का इस सम्बन्ध में विश्लेषण अपरिहार्य है।

अभाव एवं अनुशासन : यह सत्य लगभग अविश्वसनीय लग सकता है कि मई 1861 में सातवीं संतान के रूप में रवीन्द्रनाथ टैगोर का जन्म एक जमींदार घराने में आदि ब्रह्म समाज के अनुयायी और अध्यक्ष देवेन्द्रनाथ ठाकुर के घर में हुआ। परन्तु लगभग दस वर्ष की उम्र में पिता के साथ पहली बार यात्रा में जाने से पूर्व उन्होंने एक अमीर बालक की पूरी वेषभूषा कभी नहीं पहनी थी। उनके पालन-पोषण में नौकरों की उपस्थिति के अतिरिक्त कोई सम्पन्नता दिखाई नहीं देती थी। भौतिक-अभाव उन्हें कभी लगे ही नहीं बल्कि बच्चों को दी जाने वाली अत्यधिक भौतिक वस्तुओं और सुविधाओं को वे नकारात्मक मानते हुए कहते हैं, ''जब सुविधाएँ भरपूर होती हैं तो मन भी धीमा हो जाता है ..... जो अभागा बच्चा खेलने की अनगिन चीजों के बोझ से दब जाता है, उसे उन चीजों से कुछ नहीं मिलता।'' (आत्मकथा पृ. 16)

बल्कि ऐसी सुविधाओं के विपरीत और नौकरों की उपस्थिति की तथाकथित सुविधा के कारण टैगोर का बचपन अनुशासन की कठोर कैद में ही

बीता था। नौकर 'शाम' सफेद खड़िया से जो घेरा खींच देता था, उस घेरे से बाहर कदम रखने की अनुमति बालक रवीन्द्र को नौकर के लौट जाने तक नहीं थी। बल्कि स्वयं टैगोर के अनुसार- ''घर से बाहर जाने की हमें मनाही थी, यहाँ तक घर में भी चारों ओर घूमने की हमें इजाजत नहीं थी। इस तरह की बंदिशों में से ही हमें संसार की सुंदरता को देखना पड़ता था।''

शायद इसी कैद जैसे अनुशासन ने विश्व कवि को जगत् दर्शन, प्रकृति-अनुभूति, परिचितों का अन्वेषण-विश्लेषण, स्व-दर्शन और कल्पना शक्ति की अंतरतम जिज्ञासा करने की प्रेरणा व अवसर भी दिया और वे स्वयं इस उदात्त अनुभूति को कर पाए -

ना चाहित मोरे जा करे छे दान,
आकाश आलोक, तनु, मन, प्राण
दिने-दिने तुम नितेछ आमाय
से महादानेरई योग्य करे
अति इच्छार संकट हेते
बाँचाये मोरे!

''यह आकाश, प्रकाश शरीर मन और प्राण मुझे बिना माँगे मिल गये हैं। तुम दिन-प्रतिदिन मुझे महान दान को ग्रहण करने योग्य बना रहे हो। साथ ही तुम अत्यधिक इच्छाओं के संकट से भी मुझे बचा लेते हो।''

(4) संभवत: बचपन के एकांत ने उन्हें स्वानुशासन और एकाग्रता से अंतर्यात्रा के उत्कर्ष पर पहुँचने के ऐसे सार्थक संकेत दिये। लौंजाइनस भी इतिकार की प्रेरणा के लिए उन्मुक्तता एवं नियमबद्धता को समान रूप से अनिवार्य मानते हैं।

साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कलेवर तथा विशिष्ट सान्निद्य : रवीन्द्र स्कूली शिक्षा के वातावरण और पद्धति को आरंभ से ही नकार चुके थे। इसलिए संभवत: बचपन में उनके स्कूल बार-बार बदलते रहे। यूरेशियन अकेडमी, जूनियर स्कूल, नार्मल स्कूल आदि। अधिकतर स्कूली शिक्षकों को वे 'शिक्षक-मशीनें' मानते थे। फिर भी वे जूनियर स्कूल के फादर दी पेनरंड, डेव्हन शायर, फादर हैनरी जैसे स्कूली शिक्षकों से न केवल प्रभावित बल्कि प्रेरित भी हुए। उन्हें घर पर विविध विषयों की शिक्षा देने वाले पंडित वागीश (आदिधर्म विशेषज्ञ), संस्कृत और अंग्रेजी के शिक्षक ज्ञानबाबू, गोविन्द बाबू, श्री कंठ बाबू से उन्होंने विषय-ज्ञान ही नहीं, जीवन-शिक्षा भी प्राप्त की। शिक्षा और शिक्षकों की इस विविधता के साथ-साथ उनके परिवार के सांस्कृतिक और अकादमिक वातावरण ने रवीन्द्र की रचना में औदात्य हेतु आवश्यक तत्त्वों के निर्माण एवं व्युत्पत्ति को पुष्ट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके सगे तथा ममेरे-भाई, गुजेन्द्र, सत्येन्द्र, ज्योतिरेन्द्र भाई ने बालक रवीन्द्र के व्यक्तित्व को बचपन से ही न केवल प्रेमोन्मुखी और ज्ञानोन्मुखी किया अपितु उदात्तोन्मुखी भी बनाया। यह तथ्य उस घटना से स्पष्ट है जब अच्छे चाल-चलन के लिए भाई सत्य को स्कूल से ईनाम मिलने की सूचना रवीन्द्र बेतहाशा उत्साह और खुशी के साथ अपने बड़े चचेरे भाई गुजेन्द्र को सुनाते हैं तो बालक रवीन्द्र के प्रति बड़े भाई के मन में सहसा आदर की भावना उत्पन्न होती है। बालक का यही औदात्य विकसित होकर कवीन्द्र में अभिव्यक्त होता है-

''तोमा-परे करिया निर्भ के श्रान्तिर रात्रे
जेन सकल अंतर निर्भये अर्पण करि
पथ धूलि तले निन्द्रारे आहवान करि,
प्राण पण बले क्लान्त चित्ते नाहि
तुलि क्षीण कलेवर
तोमार पूजार अति दरिन्द्र उत्सब।''

''उस थकान भरी रात्रि में सम्पूर्ण भेदों को त्याग कर मैं तुम्हीं पर निर्भर रहूँ तथा तुम्हारी पद धूलि सर्वस्व समर्पित कर निन्द्रा का आह्वान करूँ। मैं

प्राण पण से तुम्हारी पूजा का अत्यंत दरिद्र उत्सव मनाऊँ तथा दुखी होकर क्षीण कलरव न करूँ।''

रवीन्द्र के इन्हीं सान्निद्यों से उन्होंने अपना अहं, अपनी वासनाएँ, भौतिक आकांक्षाएँ तिरोहित कर स्वयं को समर्पित कर देने का औदात्य प्राप्त किया है।

इनके अतिरिक्त भी बांगला की पारिभाषिक शब्दावली पर अकेले ही उत्साह से काम करने वाले राजेन्द्रपाल मित्र, प्रतिबद्धता के प्रतीक बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोने वाले महात्मा गाँधी, सहपाठी और रविबाबू के बांगला अध्ययन में सहायक मित्र लोकन पालित, बड़े होकर भी बाल रवीन्द्र का सम्मान करने वाले बिहारीलाल चक्रवर्ती, साहित्यिक प्रोत्साहन देने वाले अक्षय चौधरी और शारदा मित्र, लंदनवासी डॉ स्कॉट, उनकी परम पतिव्रता पत्नी, किशोर उम्र की उनकी दो लड़कियाँ आदि वे लोग थे जिन्होंने रवीन्द्र के अंत:संसार को परिमार्जित किया। परन्तु उनके जीवन और मानस को दृढ़ता, विश्वसनीयता, सुरक्षा और विचारों की उन्मुक्तता देने में उनके पिता की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी।

यह सच है कि उनके पिता श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर आम पिताओं की तरह पुत्र को नित्य लाड लडाने, कंधे पर बिठाकर घुमाने, बाजार ले जाकर खिलौने-मिठाई दिलाने वाले व्यक्तित्व नहीं थे।

आम तौर पर काम से दौरों पर रहने वाले पिता से बालक रवीन्द्र का ठीक से मिलना तो 'हिमालय यात्रा' के समय हुआ। कठोर व्यक्तित्व के धनी पिता के साथ संवाद और चर्चा की शुरुआत यहीं से हुई। स्वयं रवीन्द्र ने स्वीकार किया है कि उनकी कई बचकानी-अपरिपक्व बातों और कार्यों, योजनाओं के बारे में पिता ने कभी डाँटा या टोका नहीं अपितु उन्हें प्रोत्साहन ही दिया। जो प्रस्ताव भी पिता के सामने नकारात्मक उत्तर की आशंका के साथ रखे, उन पर भी हमेशा स्वीकृति मिली। इस व्यवहार ने कवि रवीन्द्र को एक विशेष उन्मुक्तता और स्वतंत्रता की अनुभूति से सम्पन्न किया। इसी कारण उन्होंने अपनी मुक्ति का मार्ग भी स्वयं अपनी तरह से खोजा -

''वैराग्य साधने मुक्ति, से आभार नय।
असंख्य अंधन माझे मह्वानंदमय
लाभिब मुक्तिर स्वाद एइ बसुधार''

''वैराग्य साधनों से जो मुक्ति मिलती है, वह मेरे लिए नहीं है। मैं तो असंख्य बंधनों के बीच अत्यन्त आनन्दमयी मुक्ति का स्वाद प्राप्त करूँगा।''

यात्राएँ-चिंतन-निष्कर्ष : राहुल सांकृत्यायन की मानें तो एक यात्रा सौ किताबों के समान ज्ञानवान होती है। अहमदाबाद, हिमालय एवं अन्य स्थानीय यात्राओं, एशियाई देशों विशेष रूप से दो बार इंग्लैण्ड की यात्राओं ने रवीन्द्र को विश्व-दृष्टि देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन यात्राओं से पूर्व कृतिवास रामायण, अमरुक शतक, मेघनाद-वध, गीत गोविंद, कुमारसम्भव जैसे ग्रन्थों का अध्ययन कर चुके रवि बाबू मैकबेथ का अनुवाद कर चुके थे। टेनीशन, शेक्सपीयर, मिल्टन, बायरन के अध्ययन ने उन्हें विश्व साहित्य की अनुभूति और अभिव्यंजना के विविध आयामों से परिचित करवाया। लौंजाइनस इसे ही उदात्त रचनाओं से भाव-ग्रहण (Plagairatin) कहते हैं। यद्यपि अँग्रेजी शब्दकोश में इसका अर्थ 'साहित्यिक चोरी' कहा गया है परन्तु लौंजाइनस ने इसे अन्य रचनाओं से भावापहरण अथवा भाव ग्रहण ही मानते हैं। इस तत्त्व ने कवीन्द्र को चिंतन की आधारभूमि और दिशा दी। लौंजाइनस ने माना कि ''विचार की महत्ता का जन्म आत्मा की भव्यता से होता है ... उदात्त महान आत्मा की प्रतिध्वनि है।'' परन्तु लौंजाइनस विविधमुखी महान विचारों के बारे में मौन हैं। रवीन्द्र के विविध क्षेत्रों की गहन पड़ताल और महान विचारों ने उन्हें कुछ क्षेत्रों-संगीत,

काव्यकला, चित्रकला निर्माण आदि में उदात्त तत्त्व से सम्पन्न किया। यह कहना कतई उचित नहीं होगा कि कृषि के वैज्ञानिक-विधानों की ज्ञान प्राप्ति, पत्रिकाओं के सम्पादन, शोषितों के लिए उनके द्वारा किये गये कार्यों, अँग्रेजी हुकूमत की कार्य प्रणाली के विरुद्ध रवीन्द्र के कार्यों और विचारों ने उन्हें काव्य, संगीत और चित्रकला के क्षेत्रों में औदात्य के महान स्वरूप तक पहुँचाने में कोई भूमिका नहीं निभाई अथवा उनकी चिंतन-गति एवं दिशा को कतई प्रभावित नहीं किया। यह कहना भी अनुचित होगा कि धर्म, राष्ट्र, समाज शोषितों के प्रति करुणा ने उन्हें 'विश्व कवि' के रूप में स्थापित करने में कोई योगदान नहीं दिया। जहाँ कुछ विचारकों का चिंतन समाप्त होता है, वहाँ से कवीन्द्र का चिंतन प्रारंभ होता है-

''भावनाओं से जब दिल भर जाता है, तब कलम से कुछ बाहर निकल ही पड़ता है। लेकिन इतने कारण से यह लिखा हुआ बढ़िया नहीं माना जा सकता। .... इसी तरह मन के भावों में डूबे रहना ठीक नहीं। यह कविता बनाने में पोषक नहीं हो सकता। कला में कुशल इन्सान को यत्न करके थोड़ी-बहुत अलिप्तता पा लेना जरूरी है।'' आपको याद ही होगा एडवर्ड बुलो अपने मानसिक-अंतराल के सिद्धान्त में रचनाकार के साथ-साथ आस्वादक के लिए यही तो बात कहते हैं-

''एक हद तक उपयुक्त मानसिक अलगाव रखने की क्षमता के बिना न तो उच्चतम कोटि की रचना की जा सकती है और न ही आस्वादक आस्वाद कर पाता है। यह मानसिक अंतराल अपेक्षित से कम अपेक्षित से अधिक, दोनों ही स्थितियों में बाधक हैं।''

यहाँ कुछ चिंतन निष्कर्षों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा। वे कहते हैं, ''इन्सान शब्दों से जो बात कह सकता है, उसकी बजाय कितनी ही ज्यादा उलटफेर भीतर होती रहती है।'' (आत्मकथा-49)

चार्ल्स डिकन्स ने भी पुरस्कार लेते हुए कमोवेश यही कहा था कि जो मन में उमड़ता है, उसका बमुश्किल एक छोटा हिस्सा ही कह पाना सम्भव होता है।

क्रोंचे भी इसी मकसद से मानते थे कि मूल रचना तो मानस में हो जाती है, माध्यम पर तो उसका एक अंश मात्र ही अभिव्यक्त होता है।

जर्मनी के नोबेल पुरस्कार विजेता उपन्यासकार हैर्मन हेसे के उपन्यास 'डेमिआन' के नायक का बचपन और उसके रिफ्लेक्शन में आपको रवीन्द्रनाथ टैगोर के बचपन की छवि मिल सकती है। पर इससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण यह तथ्य है कि जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में सुदूर बैठे विभिन्न लेखक क्या अनायास एक ही अनुभूति के धरातल पर खड़े दिखाई देते हैं? क्या यह एक महज संयोग है या सौन्दर्यशास्त्र (Aeisthetic) का यह निष्कर्षपूर्ण सिद्धान्त कि चरम पर पहुँच कर सभी कलाएँ परस्पर एकाकार हो जाती हैं? स्थापत्य कला 'फ्रोजन म्यूजिक' बन जाती है, संगीत चित्र बन जाता है ... ..देखिए रवीन्द्र एक ओर लिखते हैं-

पूजिब ताहारे जोड़करि/व्याकुल नयन जले
पूजिब ताहारे परानेर धन/सपिया चरण तले
आदेश पालन करिया तोमारि/जाबे से आमार आँधारि
शून्य भवने बसितबपाये अपिंब आपनारे
पठाइले आजि मृत्यर दूत
आमार घरेर द्वारे

(7) मैं हाथ जोड़ कर तथा व्याकुल नेत्रों में जल भर कर उसकी (मृत्यु की) पूजा करूँगा, उसके चरणों पर अपने प्राण धन को न्योछावर कर उसकी पूजा करूँगा। मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन करूँगा और वह मेरे प्रभात में अंधकार भर कर लौट जाएगा। उस समय मैं अपने सूने घर में बैठ कर स्वयं को तुम्हें समर्पित कर दूँगा। तुमने आज मेरे घर के द्वार

पर मृत्युदूत को भेजा है। (बचपन में माँ की मृत्यु, 22 साल की उम्र में विवाह, कुछ ही वर्षों में पत्नी की मृत्यु, लड़की की मृत्यु, छोटे लड़के की मृत्यु।)

आश्चर्यजनक रूप से हेर्मन हेसे भी लिखते हैं- ''मृत्यु का बुलावा तो वास्तव में स्नेह का बुलावा है। यदि इसका जवाब सकारात्मक रूप में दिया जाए, यदि हम जीवन और इसके रूपान्तर के महान सनातन रूप को स्वीकार कर लें तो यह बेहद मधुर हो सकती है।'' दरअसल 'डेमिआन' उपन्यास में कई जगहों पर 'मृत्यु को रचना प्रक्रिया के पुनः आरंभ होने का मात्र एक चरण'' बताया गया है .. ...पुनर्निर्माण का नया युग उसी से आरंभ होता है।

हेर्मन हेसे की मृत्यु के बाद इंग्लैण्ड के पैंथर प्रकाशन से प्रकाशित ''हेर्मन हेसे-ए पिक्टोरियल बॉयोग्राफी'' में यही जीवन दर्शन कई रूपों में मिल जाता है। हम इसे भी केवल संयोग न मानें कि चेकोस्लोवाकिया के नोबेल पुरस्कार प्राप्त कवि यरोस्लाव साईफर्त भी अपनी कविता 'पिकाडिलो की छतरी' में मृत्यु के सम्बन्ध में ऐसी ही बात कहते हैं-

''जीवन भर स्वाधीन रहने की उत्कण्ठा
थी मुझ में।
अंततः रास्ता निकल आया।
जहाँ से इस ओर प्रवेश करना
सम्भव है
यह मृत्यु है।'

बेशक यह मृत्यु का नहीं, मृत्यु के प्रति रचनाकार के बोध का औदात्य है। यहाँ मेरा यह मकसद कतई नहीं है कि विभिन्न देशों के रचनाकारों का समानबोध औदात्य को कोई ठोस आधार या प्रमाण है। वस्तुतः यह मामला बोध चिंतन और निष्कर्षों के गुंफित सह संबंधों का है, जिनके अंतिम निष्कर्ष विभिन्न, यहाँ तक विपरीत होने पर भी औदात्य स्पर्श में कोई अवरोध नहीं होता है।

भारत में कला विचार भरत मुनि के नाट्य शास्त्र से प्रारंभ होता है, लौंजाइनस वक्तृत्व कला के माध्यम से कला सिद्धान्त दे जाते हैं और पश्चिम जगत 'ऐस्थेटिक्स' के सिद्धान्तों से कला- विवेचन करता है।

प्रायः पश्चिम के प्रभाव से आरोपित रवीन्द्रनाथ टैगोर की पश्चिमी-धारणाओं से भिन्न निष्कर्ष भी उन्हें उत्कर्ष की ओर ले जाते हैं। आप सहमत हों कि नहीं पर बचपन में पंडित मधुसूदन मास्टरजी ने बांगला भाषा में बालक रवीन्द्र के सर्वोच्च अंकों पर विश्वास न कर दोबारा परीक्षा लेने पर भी सर्वोच्च अंक लाने पर इस बालक प्रतिभा को सम्मान के साथ स्वीकारा था, पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले रवीन्द्र से बहुत से लोग असहमत हो सकते हैं जब वे लिखते हैं- ''चोटी तक पहुँची हुई कला में जो भोलापन दिखलाई पड़ता है, वह अँग्रेजी साहित्य में अभी तक नहीं आया।''

दुनिया में गाने के अधिकतर ग्रेमी अवार्ड जीतने वाले यूरोपियन संगीत और भारतीय संगीत के बारे में उनके तुलनात्मक विचारों से भी बहुत-सी असहमतियाँ हो सकती है।

''हमारे देश में राग-ताल आदि संभाल कर गाना ही खास बात मानी जाती है, लेकिन योरोप में दारोमदार आवाज के ऊपर है ... हमारे देश में हम गाना सुनने जाते हैं, वहाँ गाने को महत्त्व नहीं है, किन्तु कमाई हुई आवाज को है .... मैं इसे इन्सानी आवाज का गलत इस्तेमाल मानता हूँ।'' (आत्मकथा- 122-123)

संगीत और काव्य की बात करते हुए रवीन्द्र नाथ टैगोर पाश्चात्य सौन्दर्यशास्त्री द्वारा स्थापित ललित कलाओं की सूक्ष्मता के क्रम को खारिज करते हुए दिखाई देते हैं, एस्थेटिक्स में ललित कलाओं का स्थूल से सूक्ष्मता-क्रम स्थापत्य कला, मूर्ति कला, चित्र कला, संगीत और काव्य कला मानते हैं पर कलाविद् रवीन्द्र कहते हैं, ''असल में

देखा जाए तो जहाँ शब्द की पहुँच नहीं है, वहीं गायन का काम शुरु होता है। अंजान बातों को विस्तार के साथ बताने की ताकत गायन में है। हम शब्दों के द्वारा जो बात नहीं कह सकते, गायन के द्वारा वही बात जता सकते हैं।''

दरअसल बात सहमतियों और असहमतियों की नहीं है, कलाओं, दर्शन विचारों, अनुभूतियों की तीव्रतम ग्रहणशीलता, उस ग्रहणशीलता की स्पष्टता और उस स्पष्टता की सर्वोच्च अभिव्यक्ति की है। औदात्य के छोटे-छोटे उत्स उनमें छिपे हुए हैं, ऐसे चमकीले उत्स से हुआ रचाव औदात्य से मंडित होता है, वह चाहे स्थूल कला की ही कोई कृति क्यों न हो, इसलिए यह निष्कर्ष अनुचित नहीं होगा कि- चाहे रवीन्द्र-संगीत हो, चाहे उनकी चौरासी कहानियाँ हों, चाहे उनके 'आँख की किरकिरी' और 'गोरा' जैसे उपन्यास हों, कवीन्द्र के पचासों चित्र हों, नाटक हों, पर वैचारिक सृजना की दृष्टि से मिस्र के पिरामिड और प्रेम के प्रतीक ताजमहल से कतई कमतर नहीं- विश्वभारती (शान्ति निकेतन) और श्री निकेतन भी औदात्य की ऐसी ही कौंध भरी परिणितियाँ हैं, बीसियों एकड़ में सिर्फ दलदल और जहाँ से आगे मुझ जैसे कई लोगों की गिनती नहीं आती-उतने मच्छरों वाले क्षेत्र को कोई विद्या का पवित्रतम स्थल बना देना भी ऐसी ही औदात्यपूर्ण परिणति है।

ooooooo

गली नं.-2, चौपासनी,
जोधपुर (राजस्थान) 342009
मो. 9414295336/ 7014165275

छत्तीसगढ़ी लोक कथाओं में हास्य व्यंग्य

-डॉ. मृणालिका ओझा

हास्य-व्यंग्य युग्म शब्द है जो पृथक-पृथक संदर्भों का वाचक है। हास्य बाह्य स्वरूप है और व्यंग्य उसका आंतरिक रूप है। हास्य शरीर में हरकत करता है अधरों को हास्य प्रदान करता है। छटपटाने-तिलमिलाने और तीर जैसी क्षमता के साथ जब कोई हास परिहास दिल पर भी असर करता है, कचोट पाता है तो यह हास्य-व्यंग्य कहलाता है और अब हास्य व्यंग्य लेखन की एक विधा है। लोक साहित्य में हास्य की परंपरा अधिक है, व्यंग्य बहुत कम है। संप्रति छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य भी इसका अपवाद नहीं है। किसी भी लोक साहित्य में बन्ना-बन्नी गीत, गारी गीत, समधी, सरहज गीत, विवाह गीत इन सब में हास्य और हल्के-फुल्के व्यंग्य मिलते ही हैं। इधर विवाह की एक प्रथा चूलमाटी भी है। इसमें भी हास्य का पुट नजर आता है :-

'धीरे-धीरे माटी ल कोड़, माटी ल कोड़ नंदो,'
'थोरिक धीरे-धीरे, धीरे-धीरे तोर कन्हिया ल नंदो धीरे-धीरे।'

इसका मतलब नंदो जी, चूलमाटी के लिए मिट्टी को धीरे-धीरे तोड़ना, अपनी कमर को मोड़ना धीरे-धीरे। उसमें बल देना धीरे-धीरे। एक अन्य गीत में नाई को भी हास्य का केंद्र माना गया है। नाई को निर्देश देते हुए नारियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ती हैं। उनका मिश्रित हास्य वातावरण को थिरकाने लगता है। दूरदराज पर खड़े लोग भी हँसने से नहीं बच पाते। उदाहरण देखें-

'तोला माटी कोड़े लइन आवै मीत, धीरे-धीरे,'
धीरे-धीरे तोर पागा ल ढील, धीरे-धीरे'

वसंतोत्सव यानी होली में भी हास्य रस के अनेक गीत गाए जाते हैं। गौरा गीतों में भी शिव विवाह का वर्णन मन को मोह लेता है। देवार गीतों में युवती के ठुमक-ठुमक कर चलने का वर्णन है। वही 'थुल थुलकाया पुरुष' अपने नितंबों के भार से गिर जाता है। इसे सुनकर कौन नहीं हँस पड़ेगा। छत्तीसगढ़ी लोक गाथाओं में भी हास्य रस यत्र-तत्र मिलता ही है। लोक कथाओं में भी बड़ी संख्या में ऐसी वार्ता और घटनाओं का वर्णन मिलेगा कि हँसते-हँसते दिन निकल जाता है। एक खास बात यह जरूर याद रखें कि छत्तीसगढ़ी हास्य व्यंग्य की कथाओं में वे कथाएँ अति विशिष्ट है जिनमें लघुता के साथ-साथ व्यंग्य की क्षमता भी है। देखिए इतनी संक्षिप्त लघु कथाएँ शायद ही किसी भाषा में आपको मिलेंगी। उदाहरण देखिए:-

''तोर का नांव रे?''

''-- पंवारा।''

''रोटी कतेक खाबे?''

''--ठनुक बारा।।''

''काम कतेक करबे?''

''--लइका बिचारा।।।''

कहीं-कहीं पर इसी कथा को इस प्रकार भी सुनाते हैं -

''पानी कतेक पीबे?''

''-- तालाब नारा।''

''अउ काम कब तक कर बे ?''

''-- लइका बिचारा।''

छत्तीसगढ़ी मनुष्य की दृष्टि में वह हर व्यक्ति जो पेट भर भोजन और जल ग्रहण करता है उसे कार्य और परिश्रम भी जी भरकर करना चाहिए। श्रम साधना के प्रति लोगों की आस्था है। पर इस कहानी में कोई पूछ रहा है तुम्हारा क्या नाम है? उत्तर- पंवारा।

अच्छा रोटी कितना खाओगे?

उत्तर- केवल बारह।

और काम कितना करोगे?

उत्तर- मैं तो छोटा बच्चा हूँ।''

इस तरह हास्य और व्यंग्य दोनों इसमें समाहित है। आराम की प्रवृत्ति यहाँ नहीं है। एक और लोक कथा में एक मैना खेत में जाकर दाना चुगती है। उस क्षेत्र के मालिक की अनुपस्थिति में वह परम प्रसन्न रहती है। उसकी यह क्षणिक प्रसन्नता भी बंदर जैसे शक्तिशाली प्राणी को असह्य हो जाती है। बंदर मैना को व्यंग्य करते और उसका मजाक उड़ाते हुए पूछता है -

''टोंही-मोही चिरई, खाबे बिरानी खेत।
डारा-पाना टोर देहौं, का मोर लेस?''

अर्थात् : छोटी सी चिड़िया तुम दूसरों का खेत चरती हो और इतनी प्रसन्न हो कि कहीं तुम डालियाँ और पत्तियाँ भी ना तोड़ दो, नहीं तो मेरे लिए तो कुछ बचेगा ही नहीं। शक्ति संपन्न या प्रभुता संपन्न लोग कमजोर वर्ग की खुशी को कितनी देर सह पाते हैं भला और यदि कुछ भी ना बिगाड़ सके तो भी व्यंग्य बाणों से उन्हें घायल तो कर ही देते हैं। मैना आत्मनिर्भर चिड़िया है। उसे अपने स्वावलंबन पर गर्व है। वह बंदर की वाणी से निराश ना हो कर अपने स्वावलंबन पर गर्व करती है बंदर को घृणा से देखती हुई वह उत्तर देती है -

''मनखे कस हाथ गोड़, मनखे कस काया,
बारह महीना बैठे रहेब, घर काहे न बनाया।''

अर्थात् : ओ बंदर मामा, तुम्हारे हाथ-पैर और शरीर तो मनुष्य की तरह है, फिर तुम बारह महीने बैठे रहते हो घर क्यों नहीं बना लेते। तुम्हें यह डालियाँ और पत्तियाँ टूटने का डर फिर तो नहीं होता।'' इस तरह कर्तव्यनिष्ठा और ईमानदारी का गुण छत्तीसगढ़ी मनुष्य में स्वावलंबन के रूप में और बातचीत हास्य व्यंग्य के रूप में विद्यमान है। जो लोग दूसरों के श्रम पर निर्भर होकर जी रहे हैं उनके लिए श्रम करने वालों के लिए, मेहनतकश इंसानों के लिए, दया भावना का विचार हास्यास्पद हैं। इसी तरह की एक और लोककथा है जिसमें एक सांप और चूहे के बीच बातचीत में भी उद्दंड और निर्दयी

मनुष्य को दूसरों को बलपूर्वक भय दिखाकर काम करने वालों पर व्यंग्य किया गया है। ऐसी लोक कथाएँ मनुष्य के आत्मसम्मान को जगाती हैं। उदाहरण देखें :-

''मुसवा के बिला मं सांप समाय,
जे ला गरगसई, तउन भगाय।''

अर्थात् सांप अपना बिल नहीं बनाते चूहे के बिल में जबरदस्ती घुसकर रहते हैं। परंतु जिसे अपनी जान का जोखिम अधिक हो वही पलायन कर जाता है। ऐसी परिस्थिति में चूहा ही अपनी जान बचाने के लिए भाग जाता है। इसी तरह लोककथा में यह स्पष्ट है की सीधा-साधा सद्भावना युक्त मनुष्य जहाँ रहता है उस वातावरण को विषाक्त नहीं करना चाहता। वहीं दुर्भावनाग्रस्त लोग दूसरों को भय दिखाकर पलायन के लिए मजबूर कर देते हैं।

एक बहुत ही मजेदार लोककथा का उल्लेख करना भी समीचीन होगा जिसमें रूप, रंग और शारीरिक बनावट को परिलक्षित करते हुए वार्तालाप स्पष्ट दिखाई देता है। एक भैंस जो कि रंग-रूप और विशाल काया के कारण थोड़ी भयावह दिखती है अपने बड़े शरीर से किसी को भी डरा सकती है। ऐसे में एक खूबसूरत सुकोमल बकरी जो हरी-भरी छोटी झाड़ियों के पत्ते खा रही थी और उन्हीं के बीच में विश्राम कर रही थी वह धूप में बेहद परेशान गर्म सड़क पर भागती हुई भैंस पर व्यंग्य शक्ति का वाक् प्रहार करती है और कहती है -

''लहकत-लहकत आवत हो राम,
तरी के भोंभरा, ऊपर के घाम।''

अर्थात् : कैसे दौड़े-दौड़े आ रही हो? नीचे गरमा-गरम सड़क है और ऊपर तेज धूप का प्रहार।

भैंस इस बात को सुनकर पल भर के लिए तिलमिलाती है और शीघ्र ही उसे पावस ऋतु की याद आ जाती है। तब इन्हीं सड़कों पर आनंद मगन होकर, भैंस चलती है किंतु बकरी आकुल-व्याकुल होकर अपनी सुरक्षा के लिए दौड़ती-भागती अपना ठिकाना ढूंढती है। इसीलिए भैंस उसे स्मरण दिलाती है :-

''जब आहे सावन के झरी।
तब तुम मरिहा, कोनहा तरी।''

अर्थात् : आज ग्रीष्म ऋतु में मैं परेशान हो रही हूँ पर बरसात आने पर तुम अपनी रक्षा के लिए इधर-उधर दौड़ोगी और किसी कोने-कोंटे में अपना ठिकाना ढूंढोगी। तो इस तरह हम देखते हैं कि लोक कथाओं में हास्य और व्यंग्य छत्तीसगढ़ में बहु प्रचलित है। इसमें खास बात यह है कि ये लघु कथाएँ अत्यधिक लघु और अपनी कसावट और बुनावट के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं। राजा भी काल के हाथों नहीं बच पाता। बंदर शाखाओं पर कूद सकता है, लेकिन घर बनाने की कला उसमें नहीं है। अब एक और लोककथा में भालू पर बंदर द्वारा किया गया व्यंग्य और भालू के द्वारा बंदर पर किया गया बेहद तीक्ष्ण कटाक्ष देखिए। एक भालू ने व्यंग्य करते हुए एक बंदर से कहा -

''ए पार नरवा, वो पार तलबवा,
धरती मं कइसे रेंगे, हवा मं फँलगइया।' इस पर बंदर दुखी होता है और भालू को उसकी विवशता पर हँसी उड़ाते हुए कहता है-

''ए पार नउवा, वो पार नउवा,'
तोर मुड़ दिखे कइसन घांस कस घाघरा'
तोर बर नउवा नइ मिले रे?''

अर्थात् इस तरफ भी नाई रहता है और उस तरफ भी नाई रहता हैं पर तुम्हारा सिर घास के जंगल की तरह दिखता है। क्या तुमको बाल मुंडवाने नाई नहीं मिलते?

तो इस प्रकार छत्तीसगढ़ी लोक कथाओं में व्यंग्य बड़े सुतीक्ष्ण हैं। उनकी बनावट और कसावट मजबूत है, किंतु वे अत्यंत लघु कथाएँ हैं। अपनी प्रवृत्तियों की ओर अपना ही ध्यान आकृष्ट करने के लिए ऐसी व्यंग्य कथाएँ लोक कथाओं के रूप में सृजित और निर्मित होती हैं। व्यंग्य में मर्यादा की सीमा का भी उल्लंघन नहीं मिलता। अभद्रता भी नहीं होती और अधिक कड़वाहट भी व्याप्त नहीं है।

परंतु जिन कथाओं में हास्य प्रधान है, व्यंग्य गौण है ऐसी कथाएँ भी कम मधुर नहीं है।

उदाहरण देखें :- एक बेंगचा अर्थात् छोटा मेंढक टर्र-टर्र करता रास्ते पर मुदित मन से कूद रहा था तभी दौड़ कर आते हुए ऊंट को देखकर वह व्यंग्य करता है -

''रह बे डगम्बा, खुंदबे झन।''

उस छोटे से मेंढक को देखकर ऊंट हँस पड़ता है और यह कहते हुए आगे बढ़ता है -

''उठ बे वो मेंचकुल, तोला कोन देखतुल।''

अर्थात् : अरे छोटे से मेंढक भाग जा मेरे रास्ते से, भला तुझे भी कोई देखता है।''

इसी प्रकार एक कथा और भी है। एक हाथी तालाब में पानी पीने आया मेंड़ पर बैठी हुई मेंढकी डर तो गई थी किंतु हँसी उड़ाती हुई पूछती है -

''आंखी लिबलिब,'
सूप कस कान,
मोला खुंद देबे का रे?''

अर्थात् : बिल्कुल छोटी छोटी आँखों वाले और सूपा जैसे बड़े कान वाले ओ विशालकाय हाथी तुम क्या मुझे खूंद दोगे? अब तो हाथी भी पीछे नहीं रहा, तुरंत जवाब दिया -

''छंपकी नकटी,'
भुईं दबक्की,
तोला पूछ थे कौन?''

अर्थात् : ए छोटी सी बिना नाक की जमीन पर लगी बैठी हुई मेंढकी, भला तुझे कोई पूछेगा?''

मेंढकी ने समीप के ही बैलगाड़ी पर चढ़े हुए गिरगिट से हाथी की शिकायत की तो गिरगिट ने भी किसी तरह बात को टाल दिया और हाथी को व्यंग्य भी किया -

''जान दे जावण दे, रमसिल्ला बा
घमघुसरा के वोतके गोठ।''

अर्थात् मेंढकी (रमसिल्ला बा) इस धमधूसरा अर्थात् भयानक शरीर वाले हाथी को बस इतना ही बोलना आता है।

अपने लिए घमघूसरा शब्द सुनकर हाथी लज्जित हो गया और चुपचाप आगे बढ़ गया। अंत में यह बात सिद्ध होती है की व्यंग्य की अपेक्षा हास्य रस से ओत-प्रोत छत्तीसगढ़ी लोक कथाएँ बहुल मात्रा में प्रचलित है। छत्तीसगढ़ी लोक कथाएँ रस की पराकाष्ठा का आस्वाद तो तब प्रस्तुत करती हैं, जब किसी कथक्कड़ के मुँह से भावों के उतार-चढ़ाव के साथ कही और जनता द्वारा सुनी जाती हैं।

ये कथाएँ कथक्कड़ की भाव भंगिमाओं और अंग-संचालन आदि से प्रबल अनुभूति प्रदान करती हैं। एक विचार पूर्ण दृष्टिपात करके छत्तीसगढ़ी की हास्य व्यंग्य कथाओं के विषय में यह स्वीकार किया जाएगा कि निश्चित रूप से इनमें चुभन और हास्योद्रेक की पर्याप्त क्षमता है। ये कुंठा और मानसिक तनाव से मुक्ति दिलाने में पूर्ण सक्षम है। इनका हास्य व्यंग्य मानवता की आत्मा और उसकी मर्यादा पर कहीं भी कुठाराघात नहीं करता।

=====

पहाड़ी तालाब के सामने,
बंजारी मंदिर के पास,
मोनिका मेडिकल के बाजू
वामनराव लाखे वार्ड (66), कुशालपुर,
रायपुर (छत्तीसगढ़) -492001
मो. 7415017400
8770928447

उत्तर आधुनिक दंशों की गीतात्मक अभिव्यक्ति -पूनम सिंह

पुस्तकः- दिन क्यों बीत गए' (गीत संग्रह)
लेखकः- डॉ. धनंजय सिंह
प्रकाशकः- अनुभव प्रकाशन, 4ई-28, लाजपत नगर, साहिबाबाद, ग़ाजियाबाद-5
पृष्ठ-108 / मूल्यः- 150/-

डॉ. धनंजय सिंह का 'दिन क्यों बीत गए' गीत संग्रह आज के उत्तर आधनिक पररवेश की अमानवीयता, संवेदनहीनता का आईना है। गीत मिजाज से कोमल, निजता, वैयक्तिकता से आपूरित होते हैं। लिहाजा इस संग्रह में प्रेम की महुआरी गमक है तो स्वप्नों आकांक्षाओं, अभिलाषाओं की तंत्रित झनकार भी और प्रकृति के अनगढ़ सलोने रूप की चित्रशाला भी। इन गीतों में उत्तर आधुनिकता दौर के भय, भ्रम, संशय, अविश्वास के नीले कुहरीले दंश के साथ-साथ टूटते मन के बीच दरकते रिश्तों की चरचराहट पिंहक-सिंहक भी है- चीते जैसी/ घात लगाए/ कई कुटिलताएँ/ मुग्ध हिरन की/ आँखों का/ संवेदन समझाएँ (पृष्ठः18)

मिथक हमारे समय सत्य को संवेद्य रूप से अभिव्यक्त करते हैं। महाभारत और अश्वत्थामा सत्य, असत्य के बीच मिटती छलरेखा का सजग प्रमाण है। इस भूमंडली कृत मूल्य विरोधी समय को धनंजय सिंह ने मिथकों के जरिए बखूबी पकड़ा है- अश्वत्थामा के/ व्रणों का स्राव/ ले रहा/ दिक्काल में फैलाव/ शून्य में/ चीत्कार का बिखराव (पृष्ठ-88)

इक्कीसवीं सदी पर्यावरणीय चिंता के लिहाज से बहुत सचेत और संवेदनशील करने की सदी है। धनंजय सिंह पर्यावरण चिंता को भौतिक और आक्तमिक दोनों स्तरों पर उठाते हैं। आज प्रकृति और मनुष्य के बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध विच्छिन्न हो गया है। ग्लोबलाइजेशन व आर्थिक नव उदारवाद ने प्रकृति को उत्पाद और मनुष्य को उपभोक्ता बना दिया है। मानवीय उपभोगी हवस ने प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया है। इस आत्मघाती प्रवृत्ति के चलते जल, जंगल, प्रकृति सब कुछ नष्ट भ्रष्ट हो रहा है। आज पर्यावरणीय संकट मानवीय संस्कृति के लिए चुनौती बनता जा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के साइड इफेक्ट अभी से चेतावनी दे रहे हैं। देश दुनिया पर गहराते जल संकट को कवि ने इस संग्रह में बहुत बारीकी से बयां किया है- जल का कोई/ स्रोत न दिखता/ कहीं कहीं हरियाली/

वृक्षों की डालियाँ/हो गईं द्रुमदल से खाली (पृष्ठ 51) यहाँ सूखे जलस्रोतों के वन में तपकर काला हिरन जैसा मन भी है (पृष्ठ 52) तो मरुस्थल में भटकता प्यास से व्याकुल होंठ चाटता हिरन भी। प्यास यहाँ जमीन के साथ संवेदना और प्रेम के धरातल पर भी लगी है। इनके गीतों में प्रकृति के यांत्रिक, कृत्रिम होने का दर्द भी- चमड़े के टुकड़े बिन/ प्यासा है/ आँगन- चौबारे का नल (पृष्ठ 20) आज स्थिति यह है कि मन पर/ घनी वनस्पतियों के/ जंगल उग आए (पृष्ठ18) हम सभ्य होने के बजाय जंगली ज्यादा होते जा रहें हैं। हमारी मानवीय प्रवत्तियाँ ज्यादा अराजक हो रही हैं। धनंजय अपने गीतों में इस अराजकता पर बिम्बों, प्रतीकों, रूपकों के माध्यम से कटाक्ष करते हैं- हर नदी का/ शौक है घड़ियाल/ कह न पाती/ मछलियाँ वाचाल (पृष्ठ 90) इस युग में मन का पर्यावरण भी प्रदूषित हुआ

है। इसलिए प्रकृति और मनुष्य दोनों अपने-अपने भूगोल का संतुलन खो रहे हैं। विकास की अंधी अवधारणा के चलते नष्ट होती प्रकृति, अनियोजित, अनियंत्रित शहरीकरण के चलते उजाड़ होते जंगल, गाँव, घटते प्राकृतिक संसाधनों ने इस सदी को कंक्रीट जंगलों में तब्दील कर दिया है। प्रकृति से स्वाभाविक रंग, गंध, रूप, चित्र छीन कर बाजार का गाढ़े रंग लीप-पोत दिए गए हैं। ईंट की इमारतों में तब्दील अनुर्वर नई सभ्यता का ये खौफनाक भविष्य हमें डराता है- नन्हीं सी चिड़िया/ तिनकों का/ घर अब कहाँ बनाए/ खेतों में भी/ कंकरीट के/ जंगल जब उग आए (पृष्ठ 58) कवि प्रकृति की सरहद से अदृश्य होते सौंदर्य बोध को स्मृतात्मक जगत में मूर्त करता है और वह चाहता है कि ये चित्र दृश्यमान जगत में सदैव मौजूद रहें। भौतिक रूप से प्रकृति का उजड़ना पर्यावरण के लिए ही नहीं मानवीय संस्कृति के लिए भारी खतरा है- नहीं रहे तालाब/ जहाँ बगुले/ करते थे ध्यान/ नहीं डालियों में/ बसते तीतर और बटेर/ और मोर का नृत्य/ देख पाती/ अब कहाँ मुंडेर/ महानगर/ कब ले पाता/ इस पीड़ा का संज्ञान (पृष्ठ 59) मानवीय संवेदनाएँ प्रकृति के साहचर्य में उद्दीप्त प्रदीप्त होती हैं। प्रकृति का अतिक्रमण होते ही संवेदनाएँ दी अतिक्रमित हुई। उत्तर आधुनिक मानवीय आचरण का यही सच है, हरे ताल की/छाती पर/ आ बैठी जलकुम्भी/ और किनारे पर/ कंटिया ले/ बैठे हो तुम भी (पृष्ठ18) आज जलकुंम्भी नुमा गति अवरोधक लोग सर्वत्र व्याप्त हैं। जो मानवीयता, सांस्कृतिक प्रवाहमयता के विरुद्ध कंटिया डाले बैठे हैं। अपने गीतों में धनंजय सिंह जिस प्रकृति और उस के वातावरण की सृष्टि करते हैं वह अभेद रूप से उत्तर आधुनिक मानव मन है। उन्होंने एक अलग किस्म की कहन शैली अपने गीतों में अपनाई है जिस में इंसानी फितरत और प्रकृति दोनों को अलगाना आसान नहीं। वे एक साथ दोनों को प्रवृत्यात्मक रूप से लक्षित करते हैं। हमारा समय लगातार क्रूर, बर्बर, आखेटधर्मी होता जा रहा है। आज हम अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता से कटते जा रहे हैं। एक निरीह किस्म की तटस्थता, कायरता हम सब ने अपना ली है, रास्ते/ तटस्थ हो गये हैं सब/ कौन भला मरहम दे घाव में (पृष्ठ 91) परम्पराएँ, संस्कार मानवीय संस्कृति का दिशाबोध कराती है। अति परिवर्तनकारी समय में भी उनको बचाये रखना कवि निहायत जरूरी समझता है, इस नदी पर एक पुल था/ दो ककिारे जोड़कर रखता (पृष्ठ 62)

धनंजय सिंह अपने गीतों की दुनिया में प्रेम, सहयोग, मित्रता, संवेनिशीलता और संगीत्मकता को मिलाकर एक जरूरी नागरिक नैतिकता का निर्माण करते हैं और खुद को इस कसौटी पर कसते भी हैं। व्यक्तिगत या नागरिकता उनके गीतों का नाभिकीय केंद्र है। जिस की ऊर्जा उनके गीतों में उत्प्रेरक संवाद बांधती है। काली रात को/ हमने सदा दीपक दिया/ स्नेह की हर बूंद से मन का अंधेरा पी लिया (पृष्ठ 72) वे अपने गीतों में सृष्टा तो हैं लेकिन उपदेशक नहीं।

धनंजय सिंह के गीतों में 'घर' और 'घर वापसी' बड़ी मार्मिकता से अभिव्यक्त है। मानवीयता की पहली शर्त है- घर का बचा रहना। मानवीय बने रहने के लिए हर किसी को घर लौटना जरूरी है, यह आँगन/ धन्यवाद देकर/ मन ही मन यों मुस्काएगा/ यात्राएँ/ सभी अधूरी हैं/ तू लौट यहीं फिर आएगा (पृष्ठ 82) जीवन के अनंत उपक्रमों का प्रेरक है घर। इसलिए सारी यात्राएँ यहीं से शुरू होकर यहीं खत्म होती हैं। अगर कोई घर न लौटे तो उस की चिंता, बेचैनी जिस अनिश्चिय, भय की सृष्टि करती है उसकी अनुगूंजें इनके गीतों में सुनाई देती है, रात भर गूंजी/ शहर में सीटियां/ तुम घर नहीं लौटे/ दीप मंदिर में जले होंगे/ आरती भीगे गले होंगे (पृष्ठ 92) घर है तो सब है। रिश्ते-नाते, प्रकृति, विश्वास सौंदर्य, प्रेम जैसी अनगिनत कोमल भावनाएँ हैं तो गीत है। जिस की अनुगूंज

इस संग्रह की खूबी है।

सूचना प्रौद्योगिकी व संचार क्रान्ति के जमाने में धनंजय सिंह ने हमें पूरी दुनिया को देखने का नया नज़रिया दिया, बढ़ती आत्मिक दूरियाँ, एकाकीपन, सामाजिक प्रतिबद्धता के प्रति उदासीनता को दूर कर सही मायने में विश्व ग्राम के नागरिक बनें, आओ मिल बैठें, बतियाएँ (पृष्ठ 38),

प्रेम गीत विधा का पाथेय है। उनके यहाँ पारम्परिक पारिवारिक प्रेम की मनोभूमि पर रचे गए गीत हैं ढाई आखर नाम तुम्हारा ले लिया (पृष्ठ 64), रोम रोम में सावन मुस्काने लगा (पृष्ठ 65) बिन तुम्हारे (पृष्ठ 66) स्वप्निल आकांक्षा (पृष्ठ 103) आ न सकूंगा पृष्ठ (105) चन्दन-वन महकने लगा (पृष्ठ 107) इनके गीत संवेदना के धरातल पर खरे हैं। लेकिन इन गीतों में बिम्बों, प्रतीकों में अभिनव प्रयोग कम है।

इन गीतों में निजता की ईमानदार अभिव्यक्ति है। कहीं पीड़ाओं से उबरने की संकल्पधर्मिता है तो कहीं नैतिक प्रतिबद्धता की उजास है- हमने तो (पृष्ठ 85), कक्ष से भटका हुआ उपग्रह हूँ (पृष्ठ 84), मौन की चादर बुनी ह। (पृष्ठ 80), ध्वन्यालोकी प्रियम्वदाएँ (पृष्ठ 75) आदि।

धनंजय सिंह के गीतों में आत्मिक अनुभूतियों का जीवंत संसार है। उनमें भावों का गत्वर आवेग है तो आवश्यक ठहराव भी, धीरता, जीवन मूल्यों के प्रति आस्था, समर्पण, विश्वास के साथ आत्मिक संतुलन बनाए रखने का आग्रह भी है, युगीन यथार्थ के साथ वैचारिक संलाप भी है। नैराश्य जीवन स्थितियों में भी आशान्वित भविष्य का उद्घोष और उदित बोध भी है। गीतों में विचारों, भावों, मन गंधी चित्रों का एक सुन्दर कोलाज है। इनमें बड़बोलेपन का गजान- तजान नहीं है। बल्कि शांत, संयत अभिव्यक्त की धार इनके गीतों में शब्दों के सधे प्रयोग मिलेंगे। मितकथनों की सुन्दर छटा इस गीत संग्रह को पठनीय बनाती है।

Drpoonamsingh42@gmail-com
8860673306/ 8958110859

आशा शैली वेदराम राष्ट्रीय पुरस्कार लेते हुए

कुल्लू के भव्य मंच पर शैलसूत्र की सम्पादक आशा शैली को वेदराम ठाकुर राष्ट्रीय पुरस्कार स्वरूप मार्ग व्यय के अतिरिक्त 11,000 नक़द, प्रतीक चिन्ह, शॉल, टोपी आदि देकर सम्मानित किया गया। यह पुरस्कार पूर्व उपकुलपति पंत नगर कृषि वि. विद्यालय के करकमलों से प्राप्त हुआ। इसके साथ ही इस अवसर पर इनकी तीन पुस्तकों और भोपाल की साहित्यकार अंजना छलोत्रे की दो पुस्तकों का भी विमोचन किया गया। आशा शैली के एक कहानी संग्रह हिन्दी से अंग्रेज़ी में अनूदित कहानियों का भी विमोचन हुआ। यह अनुवाद डॉ. पूजा गुप्ता द्वारा किया गया। चित्र में आशा शैली, उपकुलपति पंतनगर, अंजना छलोत्रे और पूजा

उड़ान: मानवीय संवेदनाओं का सरोकार -प्रो. नव संगीत सिंह

पुस्तकः- उड़ान (लघुकथा संग्रह)
लेखकः- दविन्दर पटियालवी
प्रकाशकः-बोधि प्रकाशन,
सी. सुदर्शनपुरा, इंडस्ट्रियल एरिया
एक्स., नाला रोड, 22 गोदाम, जयपुर
पृष्ठ-80 / पेपर बैक, मूल्यः- 120/-

आज का समय भाग-दौड़ का है। आधुनिक मनुष्य के पास इस भागदौड़ में कई बार तो सिर खुजलाने का भी समय नहीं मिलता। वह सब कुछ जल्दी-जल्दी करता है और ऐसे समय में किसके पास बड़ी-बड़ी किताबें, उपन्यास, लंबी-लंबी कहानियाँ पढ़ने की फ़ुर्सत है?

दविंदर पटियालवी ने साहित्य के अन्य रूपों (कहानी, कविता, लघुकथा पुस्तक समीक्षा) के साथ-साथ लघुकथा लेखन में भी उल्लेखनीय योगदान दिया है। उनकी लघुकथाओं की एक पुस्तक 'छोटे लोग' प्रकाशित हो चुकी है। वह पटियाला की विभिन्न साहित्यिक गतिविधियों में क्रियाशील हैं और एक लंबे अर्से से पंजाबी साहित्य सभा पटियाला से जुड़े हुए हैं। 2004 और 2018 में उन्होंने 'कलम काफ़ला' पुस्तकों में संपादक का दायित्व बख़ूबी निभाया। 2012 से वे पटियाला स्थित लघुकथा पत्रिका 'छिण' के साथ संपादक के तौर पर जुड़े हुए हैं। वह केंद्रीय पंजाबी मिन्नी कहानी मंच के सक्रिय सदस्य हैं। अपनी पुत्री प्रीतिका शर्मा के जन्मदिवस पर बाल साहित्यकार व वरिष्ठ लेखिका को हर वर्ष सम्मानित करते हैं। पत्रिकाओं के अलावा दूरदर्शन जालंधर, आकाशवाणी जालंधर, पटियाला, हरमन रेडियो सहित अन्य ऑनलाइन कार्यक्रमों एवं संयुक्त संकलनों में उनकी रचनाएँ शामिल हो चुकी हैं।

हिन्दी लघुकथा संग्रह 'उड़ान' का अनुवाद-कार्य हिन्दी के युवा लेखक/अनुवादक हरदीप सबरवाल द्वारा किया गया है। समीक्षाधीन इस पुस्तक में 51 लघुकथाएँ हैं, जो हमारे दैनिक जीवन की सामान्य घटनाएँ प्रतीत होती हैं। दविंदर की विशेषता यह है कि उन्होंने उन घटनाओं को दिलचस्प कथा-शैली के माध्यम से पेश करके पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है।

इन लघुकथाओं में लेखक ने व्यक्तिगत, आस-पड़ोस और सामाजिक घटनाओं से संबंधित विषयों को अभिव्यक्त किया है। हम सभी कभी न कभी स्वयं से अधिक धर्म को महत्व देते हैं। धार्मिक संगठन/व्यक्ति इसी प्रकार आम आदमी को ठगते हैं। संग्रह की पहली लघुकथा 'पुण्य' इसी भावना को व्यक्त करती है, जिसमें एक बेटी अपने पिता से नया सूट मांगती है लेकिन पिता मना कर देता है। जब दुकानदार चंदा मांगने आता है तो वह तुरंत सौ रुपए दे देता है। यह है हमारी मानसिकता। हमारे धर्म पर गहरी चोट। कॉलोनी के पड़ोसियों का असली चरित्र 'छोटे लोग' में सामने आया है। एक शिक्षक का व्यवहार बाहरी से अधिक आंतरिक होता है, जैसा कि लघुकथा 'सम्मान' में चित्रित किया गया है। बेटी के जन्म पर आज भी मातम होता है, स्त्री-चेतना को लेकर भले ही कोई ऊँचे स्वर में भाषण दे। 'स्त्री विमर्श' इसका प्रमाण है। हालांकि पुलिस कर्मियों का चरित्र हम सभी जानते हैं कि वे कितने सख्त और रिश्वत लेने वाले होते हैं, लेकिन कभी-कभी एक कर्तव्यपरायण कर्मचारी किसी और की मदद कर देता है और वह भी बिना किसी कारण के, यह बहुत आश्चर्य की बात है। ऐसा ही एक प्रसंग 'फर्ज' में प्रस्तुत किया गया है। इसी शीर्षक वाली एक अन्य लघुकथा में एक कर्मचारी द्वारा दो घंटे की छुट्टी देना जो ड्यूटी के लिए देर से आता है, वह भी उसके कर्तव्य की गवाही देता है। 'अनुभव' में सुनंदा की सास, जो बाल मानसिकता को समझती है, ने मुस्कान की खामोशी का राज आसानी से जान लिया है। 'लेखक' में साधारण लेखक की चिंता का समाधान दिखाया गया है। दूसरों की थोड़ी-सी मदद करने से कितना सुख मिलता है, इसका उदाहरण 'सहृदय' में देखा जा सकता है। एक आम आदमी और एक राजनेता के बीच का अंतर 'फर्क' में दिखाया गया है। व्यापारी हर चीज में केवल अपने फायदे के बारे में सोचता है, यह 'व्यापारी' नाम की लघुकथा में बहुत ही कलात्मक ढंग से दिखाया गया है।

इस प्रकार दविंदर का यह लघुकथा संग्रह सामाजिक जीवन के उतार-चढ़ाव, मानवीय प्रवृत्तियों, विडम्बनाओं, समस्याओं का सजीव चित्रण करता है। कार्यालय के काम, विसंगतियों, घर की जटिलताओं को बड़े पैमाने पर सकारात्मक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। अनुक्रम में कहानियों के शीर्षक लिखते समय एक ही शीर्षक प्रूफ रीडिंग की गलती से पृष्ठ 57, 58 पर छप गया है। भूमिका में हरदीप सभरवाल और परिशिष्ट के रूप में निरंजन बोहा, उजागर सिंह, सतिंदर सिंह नंदा, हरप्रीत सिंह राणा, जगदीश राय कुलरियाँ, दर्शन सिंह आष्ट ने देविंदर के लघुकथा-संसार के बारे में सार्थक टिप्पणियाँ की हैं। हिन्दी लघुकथा में दविंदर का हार्दिक स्वागत है!

अकाल यूनिवर्सिटी,
तलवंडी साबो-151302
(बठिंडा) 9417692015

ख्यातिलब्ध कवयित्री इन्दौर में पाठक संसद द्वारा सम्मान

ग़ाजियाबाद की ख्यातिलब्ध गीतकार एवं ग़ज़लकार डॉ रमा सिंह का इन्दौर में शासकीय श्री अहिल्या केंद्रीय पुस्तकालय में साहित्यिक संस्था हिन्दी परिवार इन्दौर की संयुक्त पाठक संसद एवं पुस्तकालय प्रमुख डॉ. लिली डावर, सचिव संतोष मोहन्ती, वरिष्ठ उपाध्यक्ष सदाशिव कौतुक एवं प्रभु त्रिवेदी आदि वरिष्ठ साहित्यकारों द्वारा भव्य स्वागत किया गया। इस अव को सुनने की फर्माइश की गई।

अयोध्या जी में मतंग के राम के साथ : रा न